अनुक्रमणिका

1. प्रियप्रवास

1. 'प्रियप्रवास' के महाकाव्यत्व पर झाँकी डालिए।

(अथवा)

'प्रियप्रवास' खडी बोली का प्रथम महाकाव्य है – समीक्षा कीजिए।

2. कामायनी

1. कामायनी में महाकाव्य का महत्त्व समझाइए।

(अथवा)

कामायनी के महाकाव्यत्व का मूल्यांकन कीजिए।

2. कामायनी में रूपक तत्त्व पर विचार कीजिए।

(अथवा)

कामायनी में व्यक्त दर्शन की समीक्षा कीजिए।

3. कामायनी महाकाव्य में 'श्रद्धा सर्ग' की विवेचना करते हुए कवि के जीवन–दर्शन पर प्रकाश डालिए।

(अथवा)

'श्रद्धा सर्ग' का भावात्मक सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।

(अथवा)

कामायनी में 'श्रद्धा सर्ग' की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

3. राम की शक्ति पूजा।

1. राम की शक्ति पूजा की समीक्षा कीजिए।

2. राम की शक्ति पूजा के काव्य सौन्दर्य का मूल्यांकन कीजिए।

4. तारापथ

1. 'नौका विहार' कविता का सारांश लिखकर विशेषताएँ बताइए।

2. 'ताज' कविता में पल्लवित पंतजी की भावनाओं को व्यक्त कीजिए।

3. 'भारतमाता' कविता में अभिव्यक्त पंतजी की देशभक्ति (देशप्रेम) का विवरण दीजिए।

4. सुमित्रानन्दन पन्त कृत 'द्रुत झरो' कविता की समीक्षा कीजिए।

5. पंत के 'प्रकृति-चित्रण' पर प्रकाश डालिए।

5. सन्धिनी

1. 'धीरे-धीरे उत्तर क्षितिज से' - महादेवी वर्मा की कविता का मूल्यांकन कीजिए।

2. 'विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात' कविता में महादेवी जी के भावोद्‌गारों की समीक्षा कीजिए।

3. महादेवी वर्मा कृत 'मधुर - मधुर मेरे दीपक जल' कविता में कवयत्री का हृदयांकन हुआ है, समीक्षा कीजिए।

4. 'मैं नीर भरी दुख की बदली' कविता में महादेवी जी की भावनाओं का मूल्यांकन कीजिए।

5. 'महादेवी का वेदना-भाव' पर लेख लिखिए।

6. महादेवी वर्मा की कविता में व्यक्त रहस्यवाद का उल्लेख कीजिए।

6. हुङ्कार

1. रामधारी सिंह 'दिनकर' कृत 'हाहाकार' कविता का सारांश लिखिए।

2. 'दिगम्बरि' कविता का सारांश लिखिए।

3. 'अनल किरीट' कविता में प्रस्तुत रामधारी सिंह 'दिनकर' की भावानाएँ क्या हैं? समीक्षा कीजिए।

4. पठित कविताओं के आधार पर 'दिनकर' के क्रान्तिकारी विचारों पर प्रकाश डालिए।

7. 'अज्ञेय'

1. 'नदी के द्वीप' कविता में पल्लवित 'अज्ञेय' की प्रयोगवादी विचारधारा स्पष्ट कीजिए।

(अथवा)

'नदी के द्वीप' सारांश लिखिए।

(अथवा)

'नदी के द्वीप' कविता में व्यक्त प्रयोगवादी भावना की चर्चा कीजिए।

2. 'अज्ञेय' कृत 'असाध्यवीणा' कविता का मूल्यांकन कीजिए।

3. 'अज्ञेय' के 'काव्य - सौष्ठव' पर विचार कीजिए।

(अथवा)

'प्रयोगवाद' के प्रवर्तक के रूप में 'अज्ञेय' का स्थान निर्धारित कीजिए।

8. धर्मवीर भारती

'अन्धायुग' कविता में डॉ. धर्मवीर भारती की भावनाएँ व्यक्त कीजिए।

(अथवा)

'अन्धायुग' कविता का सारांश लिखिए।

प्रिय प्रवास

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

पाठ - सर्ग - 1

1. 1

प्रश्न :-

'प्रियप्रवास' के महाकाव्यत्व पर झाँकी डालिए।

(अथवा)

'प्रियप्रवास' खडीबोली हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है - समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'प्रियप्रवास' :- खडीबोली हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है। यह काव्य सत्रह सर्गों में विभक्त है। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' जी की अद्‌भुत प्रतिभा एवं गहन अनुभूति का द्योतक है प्रियप्रवास काव्य। यह काव्य हिन्दी के गौरव ग्रन्थों की श्रृंखला में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस के महाकाव्यगत लक्षण इस प्रकार हैं -

2. कथानक :-

श्रीकृष्ण मथुरा चले जाते है तो व्रज में विरह-व्यथित गोप-गोपीजन कृष्णचन्द्र का गुण-गान करते हुए उनके जीवन से सम्बन्धित विविध घठनाओं का कथा के रूप में वर्णन करते हैं। पूतना, तृणावर्त, शकटासुर, वकासुर, कालीनाग, कंस, जरा संध आदि की प्रासंगिक कथाएँ आयी हैं। काव्य की संपूर्ण कथा संधि-संध्यंगों, कार्यावस्थाओं तथा अर्थ प्रकृतियों से सुनियोजित है। यशोदा और नन्द के हार्दिक भावों की व्यंजना, व्रजवासियों का करुण विलाप, पवनदूती प्रसंग, यशोदा का करुणा-क्रन्दन, उद्धव-गोपी संवाद, राधा-उद्धव संवाद, गोपियों की विक्षिप्तावस्था आदि मार्मिक घटनाओं की सुन्दर योजना की गई है। कथावस्तु प्रख्यात है। कृष्णचन्द्र को महान नेता एवं लोकसेवी नायक के रूप में अंकित किया गया है। कृष्ण के जीवन की समस्त अलौकिक घठनाओं को यथार्थ-रूप में प्रस्तुत किया गया है युग की नैतिकता, आदर्शवादिता एवं तर्कवादिता से कथानक को ओतप्रोत कर दिया गया है। कथानक लोकोपकार, समाज सेवा, जन्मभूमि के प्रति अनुपम

श्रद्धा, दुराचारी के प्रति विद्रोह-भावना, स्वदेश प्रेम आदि से परिपूर्ण होने के कारण प्रियप्रवास काव्य में महाकाव्य का महत्त्व है।

3. पात्र तथा चरित्र-चित्रण :-

हरिऔध जी ने विविध पात्रों के चरित्र का उद्‌घाटन किया है। समस्त पात्रों में से प्रधानतया चार पात्र हैं - कृष्ण, राधानन्द और यशोदा।

(क) श्रीकृष्ण :

श्रीकृष्ण को कवि ने परब्रह्म के रूप में चित्रित न करके एक महात्मा पुरुष-सिंह, लोकसेवी एवं परोपकारी नेता के रूप में प्रस्तुत किया है। मानवता की साकार मूर्ति के रूप में श्रीकृष्ण का चित्रण हुआ है। श्रीकृष्ण व्रज-जीवन के आधार बनते हैं। वे अपनी रूप-माधुरी से व्रज को विमुग्ध कर देते हैं। वे व्रज के प्राण एवं सुरम्य मूर्ति के रूप में व्यक्त होते हैं। मानवता के वे अनन्यपुजारी हैं। शकटासुर, बकासुर, व्योमासुर आदि का वध कर व्रजवासियों की रक्षा करते हैं। स्व-जाति के उद्धार को वे महान धर्म मानते हैं। श्रीकृष्ण की लोकहित भावना, कर्त्तव्यपरायणता परदु:ख कातरता एवं मानवता के प्रति अप्रमेय श्रद्धा प्रशंसनीय है। वे जन-जन के हृदय में निवास करने वाले महामानव है।

(ख) राधा :-

'प्रियप्रवास' में दूसरा प्रधान पात्र राधा है। राधा अपने प्राचीन रूप का पूर्णरूप से परित्याग करके अपने प्रिय कृष्ण के अनुकूल सदा लोकोपकार, निरत जनसेविका, भारतीय स्त्री रत्न के रूप में दर्शित होती है। उसकी रूप माधुरी, सुकुमारता, कमनीयता, संवेदन-शीलता आदि महान लक्षण हैं। स्त्रियोचित समस्थ गुणों से संपन्न होकर भी कृष्ण के प्रेम में आजन्म कौमार्य व्रत का पालन करती है। वह कृष्ण की अनन्य उपासिका है। प्रकृति के असीम सौन्दर्य में अपने प्रियतम की रूप-माधुरी वह दर्शाती रहती है। व्रजभूमि की सेवा में वह अपना सारा जीवन उत्सर्ग कर देती है और व्रज की आराध्य-देवी बन जाती है।

(ग) नन्द :-

नन्द व्रज के अधिपति हैं, अत्यन्त पूज्य तथा सम्माननीय और व्रजवासियों के लिए श्रद्धापद हैं। वे वात्सल्य के मूर्तमान रूप हैं। वे कर्तव्यपरायण पति तथा पिता हैं। पुत्र कृष्ण के लोकोपकार एवं जन-सेवी कार्यों पर वे अतुलित आनन्द की प्राप्ति करते हैं।

(घ) यशोदा :-

'प्रियप्रवास' में यशोधा का चरित्र-चित्रण अत्यन्त मार्मिक तथा प्रभावोत्पदक विधान में हुआ है। वह

मातृत्व की विमल विभूति और वात्सल्य की मूर्ति है। अपने पुत्र को मथुरा से लौट कर न आते देख कर व्यथित होती है। उसके करुण विलाप में वेदना और विह्वलता भरी होती है।

4. प्रकृति-चित्रण :-

'प्रियप्रवास' में प्रकृति का मनोहर चित्रण हुआ है। प्रकृति–सुन्दरी की अनुपम छवि और प्रकृति का रहस्यात्मक रूप काव्य में वर्णित है। प्रकृति के विविध रूपों की झाँकियाँ वर्णित हैं। प्रकृति के आलम्बन रूप का चित्रण अधिक हुआ है। नवम सर्ग के अन्तगर्ग गोवर्धन पर्वत की अलौकिक शोभा का वर्णन देखिए –

ऊँचा शीश सहर्ष शैल करके था देखता व्योम कोद्य

या होता अति ही स-गर्व वह था सर्वोच्चता दर्प से।

या वार्ता यह था प्रसिद्ध करता सामोद संसरा में

मैं हूँ सुन्दर मानदण्ड व्रज की शोभामयी भूमि का।

प्रियप्रवास काव्य में प्रकृति के मनोरम रूप के चित्र के साथ भयंकर रूप की झाँकियाँ भी अंकित हैं। प्रकृति की भीषण मूर्ति का संश्लिष्ट भयानक रूप देखिए – प्रकटती बहु भीषण मूर्ति थी, कर रहा ताण्डव नृत्य था। विकट दन्त भयंकर प्रेत भी विचरते तरुमूल समीप से।

'प्रियप्रवास' काव्य में प्रकृति के आलम्बन, उद्दीपन, संवेदनात्मक, प्रतीकात्मक आदि रूपों का वर्णन हुआ है। अलंकारों के लिए भी प्रकृति का पर्याप्त प्रयोग हुआ है। राकेन्दु जैसे मुख, मृग जैसे नेत्र, सरोज जैसे चरण, बिम्बा और विद्रुम से भी बढ़ कर कान्तिसम्पन्न ओंठ, अरविन्दमुख आदि के वर्णन में प्रकृति जन्य अलंकारों का प्रयोग हुआ है। लोक–शिक्षा के रूप में भी प्रकृति का वर्णन हुआ है। विरह व्यथित राधा पवन को अपना संदेश देकर, मधुवन में श्रीकृष्ण के पास भेजती है। दूती के रूप में प्रकृति की मनोरम झांकी का शून्य देखिए – (तू जाती है सकल थल ही वेगवाली बडी है। तू है सीधी तरल हृदया नाम उन्मूलती है। मैं हूँ जी में बहुत रखती वायु तेश भरोसा। जैसे हो ऐ भगिनी बिगडी बात मेरी बना दै।)

5. युग-बोध :-

प्रियप्रवास में हरिऔध जी ने युग की परिस्थितियों के अनुकूल ही काव्य की रचना की है। एक समय ब्रह्मसमाज,आर्यसमाज, थियोसोफिकल सोसायटी आदि सुधारवादी संस्ताएँ प्रचलित थीं। जनसाधारण के हृदयों से ऊँच–नीच, धुआछूत, मनोमालिन्य आदि की भावनओं को दूर करके सहृदयता, एकता, संगठता,

मानवता विश्वबन्धुत्व, भावन आदि का प्रचार हो रहा था। सामाजिक दुराचारों का निर्मूलन करने के लिए जन-जागरण हो रहा था। विश्वप्रेम तथा विश्वबन्धुत्व भावना प्रियप्रवास काव्य में अंकित हुई है। प्राणिमात्र के हृदय में उदारता, सहनशीलता एवं सहिष्णुता के भाव के भाव काव्य में प्रस्तुत हुए है। 'प्रियप्रवास' में तत्कालीन राजनीतिक जीवन की झांकी झलकती है और तत्कालीन युग के क्रान्तिकारी विचारों की झलक भी विद्यमान है।

6. भावपक्ष तथा रस - निरुपण :-

प्रियप्रवास विप्रलंभ श्रृंगार-प्रधान काव्य है। आद्यन्त वियोगजन्य करुणा का ही प्राधान्य है। प्रारंभिक सर्गों में कुछ क्षणों के लिए संयोग श्रृंगार की झलक मिलती है। किन्तु, वह आगामी वियोग के लिए पृष्टभूमि का कार्य करती है। नन्दबाला कृष्ण को मथुरा में छोड कर अकेले बृन्दावन लौट आते हैं, तो उस समय माँ यशोदा अपने प्राणप्रिय पुत्र कृष्ण के लिए व्यथित होती है। उसके विलाप में कितनी कसक, कितनी वेदना, कितनी टीस और कितनी वेदना भरी हुई है, जिसे सुनकर पाषाण-हृदय भी द्रवित होता है।

हा! वृद्धा के अतुल धन, हा! वृद्धता के सहारे।
हा! प्राणों के परम प्रिय, हा! एक मेरे दुलारे।
हा! शोभा के सदन, हा! रूप लावण्य वाले।
हा! बेटा! हा! हृदय धन, हा! नेत्रतारे हमारे।

यशोदा के इस वात्सल्य भाव के साथ ही राधा का वियोग भी अत्यन्त हृदयग्राह्य है। विरहिणी राधा विरहाग्नि में तपकर विरह साकार प्रतिमा बन जाती है। प्रियप्रवास काव्य में भयानक, वीर, रौद्र, अद्‌भुत आदि रसों का यत्र-तत्र सगावेण हुआ है। राधा-कृष्ण के पवित्र-प्रेम के साथ उनके वीर आषों के अन्तर्गत दानवीरता, युद्धवीरता, युद्धवीरता और धर्मवीरता तथा-देश-भक्ति, राष्ट्रप्रेम, विश्वप्रेम आदि का सजीव तथा देश-भक्ति, राष्ट्रप्रेम, विश्वप्रेम आदि का सजीव तथा मार्मिक चित्रण हुआ है। उद्धव के आगमन पर गोकुल में अत्यन्त उत्सुकता, उत्कण्ठा, आतुखा का संजीव तथा चित्रण हुआ है।

प्रियप्रवास भाव-सौन्दर्य की मनोरम झाँकियों से परिपूर्ण सरस महाकाव्य है।

7. कलापक्ष :-

प्रियप्रवास सत्रह सर्गों का सर्गबद्ध बृहत् काव्य है। इसके नवम तथा षोडश सर्ग कथा-विस्तार के कारण अपेक्षाकृत कुछ बडे हैं। कथा के अनुसार ही सर्गों की योजना की गई है। अन्य काव्यों की भाँति इस काव्य में मंगलाचरण नहीं है। 'दिवस का अवसान समीप था'। पंक्ति में दिवस शब्द मंगलाचरण का द्योतक माना

जाता है। संपूर्ण काव्य खल निन्दा एवं सज्जन प्रशंसा से परिपूर्ण है। बकासुर, अघासुर, केशी, व्योमासुर, कंस, जरासंध आदि अत्याचारियों की पर्याप्त निन्दा की गयी है। कृष्ण के मानवोचित सत्कार्यों की चर्चा में उनके अपूर्व व्यवहार, रसीली वाणी, विनम्रता, परदु:ख कातरता, सरसता गुरूजनों के प्रति शिष्टता एवं विनम्रता, व्यथितों की रक्षा, विनोदप्रियता आदि गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है।

प्रथमत: काव्य का नाम 'ब्रजांगना विलाप' रखा गया था। फिर हरिऔध ने काव्य का 'प्रियप्रवास' नामकरण किया । काव्य की भाषा संस्कृत गर्भित खडीबोली है। कहीं-कहीं व्यावहारिक भाषा की मात्रा भी मिलती है । शब्द मैत्री के साथ चित्रोपमता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है । चित्रोपम शैली का सजीव चित्र अंकित हुआ है। ब्रजभाषा दिंग, जुगुत, लैख और याँ, नाँ लाँबी, बेंडी, धौल फेर आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। काव्य की अलंकार योजना बडी ही सशक्त एवं भावानुकूल है। शब्दालंकार एवं अर्थालंकार दोनों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग हुआ है। सादृश्यमूलक अलंकारों का प्रयोग अधिक हुआ है। उत्प्रेक्षा, रूपक, रूपकातिशय, व्यतिरेक, संदेह, स्मरण, प्रतीप, परिकर, विषम, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास आदि अलंकारों का सफल प्रयोग हुआ है।

प्रियप्रवास काव्य का छन्द विधान अनुपम तथा अनूखा है । सर्वत्र संस्कृत वृत्तों का प्रयोग हुआ है। द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित, मन्दाक्रान्ता तसन्त-तिलका, वंशस्य आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है।

8. उद्देश्य :-

प्रियप्रवास में लोकहित का स्वर प्रधान रहा है। हरिऔध जी ने अवतारी पुरूष श्रीकृष्ण के अलौकिक एवं अमानवीय चरित्र को लौकिक एवं मानवीय रूप देने का प्रयत्न किया है। वे महान नेता की भाँति स्वजाति, स्वदेश एवं स्वराष्ट्र की रक्षा और उसकी उन्नति के लिए त्याग करते हुए प्रेम और परोपकार की साकार मूर्ति बन जाते हैं । कवि ने कृष्ण और राधा सम्बन्धी परम्परागत विचारों के विरुद्ध नवीन मानव जीवन का चित्रण किया है तथा उच्चकोटि के मानवीय आदर्शों की स्थापना की है। अत: प्रियप्रवास काव्य एक महान उद्देश्य एवं महत् प्रेरणा से ओतप्रोत है।

9. उपसंहार :-

प्रियप्रवास खडीबोली का प्रथम महाकाव्य है। इस काव्य की रचना के समय खडीबोली अधिक सशक्त, सक्षम एवं व्यजना-प्रधान नहीं बनी थी। अत: इस काव्य में उच्चकोटि के महाकाव्यों की सी गुरूता, गम्भीरता

आदि लक्षण ढूँढ़ नहीं सकते। फिर भी कलात्मकता, चमत्कार प्रियता, नवीनता एवं युगानुकूल अभिव्यक्ति के कारण यह महाकाव्यों की श्रेणी में रखा जाता है। पदमावत्, रामचरितमानस, कामायनी आदि महाकाव्यों की महत्ता प्रियप्रवास में नहीं है। फिर भी भावों की गहनता, विचारों की गम्भीरता, उद्देश्य की महानता, कल्पना की नवीनता, अनुभूति की तीव्रता तथा अभिव्यक्ति की कुशलता एवं प्रौढ़ता के कारण प्रियप्रवास महाकाव्यों की श्रेणी में रखा जाता है।

'प्रियप्रवास' खडीबोली के युग का आलोक स्तम्भ है और आगामी महाकाव्यों का पथ-प्रदर्शक है।

* * * * *

Lesson Writer

- अन्ना नागलक्ष्मी ए.ए.

कामायनी

- जयशंकर प्रसाद

2. 1

प्र.1. कामायनी में महाकाव्य का महत्त्व समझाइए।

(अथवा)

कामायनी के महाकाव्यत्व का मूल्यांकन कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना – महाकाव्य के लक्षण
2. उदात्त कथानक
3. उदात्त कर्म (कार्य) – इच्छा, क्रिया, ज्ञान
4. उदात्त रसयोजना
5. उदात्त पात्र
6. शैली की उद्त्त योजना
7. उपसंहार

मनु – मन

श्रद्धा – हृदय

इडा – बुद्धि

मानव – कुमार

1. प्रस्तावना - महकाव्य के लक्षण :-

साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ के अनुसार महाकाव्य के आठ लक्षण बताये गये हैं।

सर्गबन्धो महाकाव्य तत्रैको नयकः सुरः।

सद्वेशः क्षत्रियोवापि धीरोदत्त गुणान्वितः॥

1. महाकाव्य की रचना सर्गों में होनी चाहिए।
2. नायक कोई दैव अथवा सद्वंश में उत्पन्न धीरोदात्त क्षत्रिय होना चाहिए।
3. महाकाव्य की कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध या परम्परा द्वारा लोक विख्यात किसी प्रसिद्ध सज्जन की होनी चाहिए। राजाओं का एक पूरा कुल भी महाकाव्य का विषय हो सकता है।
4. श्रृंगार, वीर और शांतरस की प्रधानता के साथ अन्य रसों का समावेश होना चाहिए।
5. कम से कम आठ संतुलित सर्ग होने चाहिए और सर्ग में प्रधानत: एक ही छन्द रहना चाहिए। सर्ग के अंत में छन्द परिवर्तित कर देना चाहिए।
6. संध्या, रात्रि, प्रभात, दिन, चन्द्रमा, सूर्य, ऋतु, पर्वत, सागर, बन आदि का प्राकृतिक वर्णन होना चाहिए।
7. प्रासंगिक कथाओं का मूल कथा के साथ सम्बन्ध एवं संक्षिप्त होना चाहिए।
8. महाकाव्य द्वारा धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष में से कम से कम एक फल की प्राप्ति होनी चाहिए।

आधुनिक दृष्टि कोण :-

साहित्य और समाज का नित्य संबन्ध होता है। समय के अनुसार और समाज की चित्तवृत्ति के अनुसार काव्य का निर्माण होता है। इसलिए आधुनिक काव्यों में स्थूल के स्थान पर सूक्ष्म का प्रभाव व्यक्त होता है। पात्रों का मनोवैज्ञानिक स्तर पर चित्रण हो रहा है। बाह्य संघर्ष के स्थान पर मानसिक (आन्तरिक) संघर्ष का चित्रण हो रहा है। भौतिक घटनाओं के स्थान पर चित्तवृत्ति की संरचना दिखाई दे रही है। कामायनी में स्थूल कथा निमित्त मात्र है । कथा और पात्र अन्तर्मुख होकर चलते हैं।

प्रसाद जी ने कामायनी की रचना महाकाव्य के रूप में की है। ऐतिहासिक पात्रों को लेकर उन्होंने मानवीय भावनाओं में काव्य की रचना की है। प्रसाद जी ने स्वयं कामायनी को महाकाव्य माना है। परंपरागत काव्य शैली में हम कामायनी को बाँध नहीं सकते। आधुनिक काव्य जगत् में छायावाद और रहस्यवाद एक शास्त्रीय चेतना है। इन दोनों वादों में मानवीय भावनाओं का सूक्ष्म अनुशीलन हुआ है। आचार्य नागेन्द्र ने कामायनी की चर्चा आधुनिक दृष्टिकोण में की है, और उन्होंने स्वयं बताया है कि कामायनी – ''मानव चेतना का महाकाव्य है।''

उदात्तता कामायनी महाकाव्य का प्राण है। इसलिए महाकाव्य के सारे लक्षणों में उदात्तता कामायनी में दर्शित होती है।

2. उदात्त कथानक :-

कामायनी की घटनाएँ मानव आत्मा या मानव चेतना से संबन्धित हैं। स्वार्थपूर्ण अहंकार का पराभव, पुरुष और नारी का प्रथम मिलन, नारी का सर्वस्व समर्पण, पुरुष और नारी के प्रणय कलापों में संसृति का विलास पुरुष की अधिकार भावना बुद्धि बल से अधिकार क्षेत्र प्राप्त करना, अहंकार का वैकल्प अन्त में समरस में मग्न होना–ये सब मानव की चेतना के तथा संघर्ष के विविध स्तर हैं। कामायनीकार इन आन्तरिक घटनाओं के साथ–साथ अध्यात्मिकता को भी ले चलते हैं। मनु, श्रद्धा से उत्पन्न अपने पुत्र मानव को इडा (बुद्धि) के हाथ में सौंपकर चले जाना और तपस्या में लीन होना एक समरसता है। कथानक का प्रारंभ दुःख से हुआ है और समापन समरसता या आनन्द से। इसीलिए कामायनी का कथानक उदात्त है। उस में आदि मानव वैवस्यत मनु की कथा है।

3. उदात्त कर्म (कार्य) - इच्छा, क्रिया, ज्ञान :-

कामायनी में भाववृत्ति, कर्मवृत्ति और ज्ञानवृत्ति का सामंजस्य हुआ है। इच्छा, क्रिया और ज्ञान की विश्रृंखलता होने पर मानव जीवन विकसित नहीं होता। इसलिए इच्छा, ज्ञान और क्रिया में सामंजस्य की आवश्यकता कामायनी में बताई गई है।

ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है
इच्छा क्यों पूरी हो मन की
एक दूसरे से न मिल सके
यह विडंबना है जीवन की।

इसलिए कामायनी का कार्य भावजगत्,कर्मजगत् और ज्ञानजगत् का सामंजस्य बताया गया है।

4. उदात्त रसयोजना :-

परंपरागत महाकाव्यों में आंगी रस तथा उसकी पुष्टि में अन्य रसों का समावेश होता है। कामायनी में विविध रसों का समावेश हुआ है। प्रलय आता है तो बीभत्स रस है। आदि मानव मनु की चिन्ता में करुण रस है। श्रद्धा–हृदय और ममता के साथ आकर मनु को कर्मठ बना देती है और मनु से सन्तान की प्राप्ति भी कर लेती है। यहाँ श्रृंगार रस और वात्सल्य रस का समावेश हुआ है।

चिन्ता, आशा, काम, वासना, लज्जा आदि मनोवैज्ञानिक दशाओं को पार कर के मानव ज्ञान लोक (इडा) में प्रवेश करता है। वहाँ मानव भौम (भौतिक) परिवेश को भूलकर आनन्दमय कोश में प्रवेश करता है जहाँ

जड–चेतन, सुख–दु:ख आदि मनोमय कोश लुप्त हो जाते हैं और मन आनन्दमय कोश में पल्लवित होता है।

समरस थे जड या चेतन

सुन्दर साकार बना था

चेतनता एक विलसती

आनन्द अखण्ड घना था।

इस प्रकार कामायनी का रस मानव को मनोमय कोश से ऊपर उठाकर आनन्दमय कोश तक पहुँचाने वाला आनन्द रस है वही आत्म रस (आनन्द तत्त्व) है।

5. उदात्त पात्र :-

महाकाव्यों का धीरोदात्त या धीर ललित पात्र कामायनी में दर्शित नहीं होता। मनु के द्वारा मानव चेतना का विकास बताया गया है।

मनु विलासिता में मम्न देव जाति का प्रतीक है, जो मानव जाति का मूल पुरुष माना जाता है। चाहे मनु देव जाति का हो, उस में अनेक प्रकार की कमियाँ दिखाई देती हैं क्यों कि कामायनीकार जयशंकर प्रसाद ने उसका चित्रण सामान्य मानव के रूप में किया था। मनु अहंकार, स्वार्थ, कामलोलुमता, अस्थिरता आदि हीन प्रवृत्तियों पर खडा था। धीरे–धीरे उन से मुक्त होकर वह समरसता या कैलास सिद्धि पर जाकर आनन्द तत्त्व में लीन होता है। वह हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर बैठकर भीगे नेत्रों से प्रलय प्रवाह देखा रहा था। दु:ख में उसे प्रकृति जड और चेतन रूप में दिखाई देती थी।

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर

बैठ शिला की शीतल छाँह

एक पुरुष भीगे नयनों से

देख रहा था प्रलय प्रवाह।

वही मनु काव्य के समापन में कैलास गिरि के मानसरोवर के पास ध्यान मग्न होकर बैठा रहता है जहाँ समरस भावना ही होती है। वह एक सारस्वत नगर है – समरस नगर है।

कामायनी की नायिका श्रद्धा–विकास की प्रतीक, हृदय की प्रतीक और कामायनी नाम से कवि भी उसे बुलाते हैं। श्रद्धा पात्र का आगम कवि मनोहर रूप में करते हैं। वह हृदय की अनुकृति है और गाँधार देश की राजदुहिता है। वह विश्वास की पात्र है। श्रद्धा का अर्थ – विश्वास रखना है। चिन्ता के भार से गम्यहीन मनु को वह कर्म निष्ठ बनाती है, चेतना का मार्ग बनाती है और आत्म समर्पण करके संसृति की निष्ठा पर ले जाती

है। वह दया, ममता, विश्वास, कर्मण्य और सब से बढ़कर जीवन में असफल मनु (मन) को अंत में शिवत्व पर ले जाती है।

वह कामायनी जगत की

मंगल कामना अकेली।

इसीलिए, महाकवि जयशंकर प्रसाद हर नारी को श्रद्धा का रूप मानते हैं – ''नारी तुम केवल श्रद्धा हो।''

कामायनी का एक मुख्य प्रधान पात्र इडा है जो बुद्धि की प्रतीक है। बुद्धि के बिना मानव चेतना का विकास हो नहीं सकता। इन तीनों पात्रों के अलावा देव, पशु, सोमलता, असुर पुरोहित, आकुलि और किलात् आदि पात्रों का सृजन कामायनीकार ने किया है। सारे पात्रों के मन को समरसता प्राप्त कराना ही है।

6. शैली की उदात्त योजनाः-

कामायनी की भाषा तत्सम प्रधान होकर चित्रात्मक है। बिंबयोजना में प्रसाद जी की कलम रस पुष्ट विधान में बढ़ती है। श्रद्धा के मनु के पास आने का चित्र देखिए –

नील परिधान बीच सुकुमार

खुल रहा मृदुल अधखुला अंग

खिला हो ज्यों बिजली का फूल

मेघवन बीच गुलाबी रंग।

कवि में मनन, चिन्तन, संवाद, स्वगत, स्वप्न,ह्श्य विधान आदि की पिरकल्पना होती है। महाकाव्य की व्यंजना कामायनी में मूर्तमान हुई है। प्रलय वर्णन, मनु के अहंकार का वर्णन, घटनाओं का संविधान आदि अन्तर्मुख होकर चलते हैं।

सब से बढ़कर काश्मीर शैवागम– दर्शन प्रणाली में ढ़ालना महाकवि जयशकर प्रसाद जी की शैली की भव्यता है।

7. उपसंहार :-

कामायनी अधुनिक महाकाव्यों का महाकाव्य कह सकते हैं। भौतिक कथागमन, भौतिक स्तर पर पात्रों का चित्रण तथा संघर्ष कामायनी में नाम मात्र भी नहीं हैं। कथा आदि भौतिक है लेकिन कविवर जयशकर प्रसाद ने अध्यात्मिक स्तर पर और प्रतीकात्मक स्तर पर मानवीय भावनाओं को रुपान्वित किया है। पात्र प्रतीकात्मक हैं। कथा रुपात्मक है। एहिक पात्रों को आधार बनाकर चलनेवाली कामायनी मानव चेतना के

विकास का महाकाव्य है। हिन्दी साहित्य के लिए ही नहीं; विश्व साहित्य जगत केलिए कामायनी एक अनुपम तथा अदभुत उपलब्धि है।

महाकवि जयशंकर प्रसाद की तपस्या का महान प्रतिफलन है– कामायनी महाकाव्य। कामायनी छायावाद युग का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है।

❋ ❋ ❋

Lesson Written

- डॉ. शेख मौला अली

2. 2

प्र. कामायनी में रूपक तत्त्व पर विचार कीजिए।

(अथवा)

कामायनी में व्यक्त दर्शन की समीक्षा कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. काथा में रूपक
3. कामयनी के प्रमुख पात्र
4. प्रकृति
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना :-

तुलसीदास के बाद जयशंकरप्रसाद जैसा कवि कोई अन्य नहीं जन्मा और भारतीय संस्कृति में रामचरितमानस के बाद कामायनी जैसा महान काव्य कामयानी कोई अन्य नहीं है। छायावाद का उत्तम महाकाव्य है। इस में कामायनी, वैवस्व वधु, नारी, श्रद्धा का जीवान चरित्र है। यह काव्य आदि मानव वैवस्वत मनु पर लिखा हुआ है। प्रकृति में भगवान की छाया को देखना छायावाद है। प्रकृति में भागवान को देखना ही रहस्यवाद है। मानवीय भावनाओं को बनाकर मानवीय भावनओं के सूक्ष्म अनुशीलन पर कामायनी की रचना हुई। प्रकृति में स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है – कामयनी छायावाद का अद्वितीय अतुलित, असामान्य महाकाव्य है।

कवि यहाँ काश्मीर शैवागम का दर्शन कराते हैं। यहाँ वृषभ – शिव जी का वाहन और हम को अन्न प्रदान करने वाला जीव है। कामायनी में सतत सहचर जीवन के बारे बताया –

नर– पुरुष

नारी – प्रकृति

कामायनी में नर और नारी के चिर जीवन का चित्रण हुआ है। उनका सह जीवन बताया गया है। पुरुष और प्रकृति का नित्य और साहचर्य बताया है।

मनु (मन), श्रद्धा (हृदय), इडा)(बुद्धि)या (ज्ञान) इन तीनों के समन्वय से मानव बनता है जो मनु और श्रद्धा का पुत्र है। रूपक तत्व – जीव जब तपस्या में लीन हो जाता है वह जड से चेतन बन जाता है।

प्रकृति में मानवों की भावनाओं को प्रतिबिंबित करना मानवीकरण है। कामायनी जयशंकर प्रसाद की सांस्कृतिक गरिमा का मूर्त रूप है।

कामायनी में आद्यंत रूपक तत्त्व व्याप्त हुआ है। भौतिक घटनाओं का सूक्षम रूप भी प्रस्तुत हुआ है। दार्शनिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक आदि विषयों का सूक्ष्म अनुशीलन कामायनी में रूपान्वित किया गया है।

2. काथा में रूपक :-

कामायनी की कथा अद्यन्त रूपक है। नायक वैवस्वत मनु ही है। यह मन का रूपक है। मन और श्रद्धा (हृदय) के समन्वय का विकास कामायनी में बताया गया है। अहंकारवश मनु श्रद्धा पर आक्रमण करता है। श्रद्धा मनु में विश्वास भरकर उसे कर्मठ बनाती है और कार्योन्मुख करती है। फल स्वरुप मानव का जन्म होता है। फिर मनु (मन),श्रद्धा (हृदय) को त्यागकर इडा (बुद्धि) के संसर्ग में जाता है। अन्त में सारस्वता प्रदेश में वह तपस्या में लीन होता है। श्रद्धा उसका साथ देती है। इडा मानव को लेकर वृषभ के साथ और प्रजा के साथ हिमालयों की तराइयों में सारस्वत नगर में प्रवेश करती है।

कवि जयशंकर प्रसाद जी ने स्वयं बताया है। ''यह अख्यान (कथा) इतना प्राचीन है कि इतिहास में रूपक का भी अतभुत मिश्रण हुआ है। मनु ,श्रद्धा और इडा को सांकेतिक अर्थ में ले तो मुझे कोई अपत्ति नहीं। मनु – मन का पक्ष है, श्रद्धा – हृदय पक्ष है और इडा – बुद्धि पक्ष।''

3. कामायनी के प्रमुख पात्र :-

कामायनी के प्रमुख पात्र – मनु, श्रद्धा और इडा हैं। मनु – मनोमय कोश का जीब माना जाता है। मनु का सही अर्थ मन और चेतना है – 'मन्यते अनेन इति मनुः।' मनु का मूल लक्षण अहंकार है।

मैं हूँ यह वरदान सदृश क्यों

लगा गूँजने कानों में।

जय जीवन का वरदान मुझे

दे दो रानी अपना दुलार।

मानशीलता अहंकार का लक्षण है। कभी वह संकल्प और विकल्प में मानव को बहा ले जाती है। उस में सदा स्वार्थ- भावना, वासना, काम आदि लक्षण होने पर मानव अपने साथी (श्रद्धा) के प्रति विश्वासघात भी करता है।

कामायनी का दूसरा पात्र श्रद्धा है, जो हृदय का प्रतीक है। श्रद्धा प्रसाद जी के अनुसार विश्वासमई रागात्मिका वृत्ति है। वह गन्धर्व देश की राज दुहिता है। अपार विश्वास, उत्त्साह, प्रेरणा, सहानुभूति, ममता, मधुरिमा, त्याग, क्षमा आदि सतगुणों का वह समन्वय रूप है।

हृदय की अनुकृति बाह्य उदार

एक लंबी काया उन्मुक्त

वह मन की वेदना को दूर करने में अपने सर्वस्व को त्याग देती है। वह मन को कर्मठ बनाते हुए कहती है - शक्तिशाली हो, विजयी बनो।

कामायनी का तीसरा मुख्य मात्र है - इडा। यह बुद्धि की प्रतीक है। यह मन को तर्कयुक्तबनाकर अग्रसर होने केलिए प्रचोदित करती है। वह नितान्त बौद्धिक है। जीवन की अखंडता के स्थान पर वह वर्ग विभाजन और अभेद के स्थान पर भेद उत्पन्न करती है।

इनके अलावा श्रद्धा और मनु का पुत्र कुमार - नव मानव का प्रतीक है; पिता मनु से मनन शीलता, माता श्रद्धा से हृदय तत्व और इडा से बुद्धि तत्व वह प्रप्त करता है। इसके बाद असुर पुरोहित आदि आसुरी वृत्तियों के प्रतीक हैं। सारे देवता - नाडियों के प्रतीक हैं। वृषभ - धर्म का प्रतिनिधि है।

वृष धवल धर्म का प्रतिनिधि

सोमलता भोग का संकेत है।

4. प्रकृति :-

जल प्लावन पृथ्वी या धरती के इतहास में अत्यन्त प्राचीन है। मानव अतिविलासिता में डूबजाने के कारण वह व्यथित होकर माया में डूब जाता है। भाव- लोक, कर्म-लोक तथा ज्ञान- लोक त्रिलोक हैं। इन तीनों में सामजस्य होना मुश्किल है।

एक दूसरे से नमिल सके
यह विडंबना है जीवना की

मानसरोवर, कैलास गिरि, सारस्वतनगर आदि आनन्दमय कोश के प्रतीक है।

समरस थे जड या चेतन
सुन्दर साकार बना था

मानसरोवर के पास श्रद्धा के साथ मनु बैठकर तपस्या में लीन होना योग साधना है जो अमृत की सिद्धि है, अहंकार रहित होकर जीव मुक्तावस्था में पहुँचता है। वहाँ सहस्रदल कमल खिलता है।

जीव का मूलाधर से निफलकर इडा और श्रद्धा नडियों को साथ लेकर सहस्रदल कमल तक (सहस्रार तक) पहुँचकर अमृतत्व की सिद्धि प्राप्त करना कामायनी का रुपक तत्व है।

5. उपसंहार :-

कथा योजना, पात्र परिकल्पना, शैली की संरचना, घटनाओं का अनुक्रम, दार्शनिक परिवेश आदि में कामायनी का रूपक तत्त्व अणु- अणु में पल्लवित होता है। भाववृत्ति, कर्म वृत्ति और ज्ञान वृत्ति का सामंजस्य स्थापित करना कामायनी दर्शन है।

❋ ❋ ❋

2. 3

कामायनी महाकाव्य में 'श्रद्धा सर्ग' की विवेचना करते हुए कवि के जीवन - दर्शन पर प्रकाश डालिए। (अथवा)

कामायनी में 'श्रद्धा सर्ग' की भावगत तथा शैलीगत समीक्षा कीजिए। (अथवा)

'श्रद्धा सर्ग' का भावात्मक सौंदर्य स्पष्ट कीजिए। (अथवा)

कामायनी में श्रद्धा सर्ग की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. काथानक
3. नवीन मन्वन्तर का आरम्भ
4. सौदर्य चित्रण
5. नाटकीय संरचना
6. अलंकर संयोजन तथा भाषा
7. उपसंहार

1. प्रस्ताक्ना :-

जीवन का मूल तत्व श्रद्धा है। यह सर्ग कामायनी महाकाव्य कथा – श्रृंखला की एक अनिवार्य कडी है। संपूर्ण कथानक का आघारभूत तत्त्व इसी सर्ग में विहित है। श्रद्धा ही कामायनी है। वह काम की पुत्री है। वह कुतूहल की मूर्ति है। नायक – नायिकाओं का प्रथम मिलन इसी सर्ग में होता है। कामायनी महाकाव्य रूपी सुन्दर माला में श्रद्धा सर्ग एक अनमोल मणि है। मनु और श्रद्धा का मिलन एक मन्वन्तर का शुभारम्भ है। श्रद्धा मनु से स्पष्ट कहती है–

''बनो संसृति के मूल रहस्य।''

प्रसादजी श्रद्धा का मनोवेज्ञानिक रूप अकित करते है। काव्य में श्रद्धा एक मानसिक प्रवृत्ति के रूप में प्रस्तुत होती है। वह मनु को सृष्टि के उद्देश्य का बोध कराती है–

और यह क्या तुम सुनते नहीं

विधाता का मंगल वरदान

'शक्तिशाली हो, विजयी बनो'

विश्व में गूँज रहा जय गान।

2. कथानक :-

तेजस्वी किन्तु शांत,थके तथा दुखी मनु को पर्वतीय एकांत में श्रद्धा देख कर जिज्ञासा प्रकट करती है – ''सृष्टि – सागर के किनारे तरंगों से फेंक हुई मणि के समान मौन होकर निर्जन का अमिषेक करनेवाली तुम कौन है ?'' मन को श्रद्धा की वाणी मधुकरी का गुंजार प्रतीत होती है। श्रद्धा के शरीर, परिधान में अघखुले अंग, मुख, अधरों की मुस्कान और स्पंर्श पर मंनु विविस कल्पनाएं करते है। उसकी छवि पर मुग्ध हो मनु पूछते है– 'तुम कौन हो ?'

श्रद्धा उन्हें अपना परिचय गाधार नरेश की प्यारी संतान के रूप मे देती है। बह मनु के अदसाद में धैर्यपूर्वक सवेदना प्रकट करती है। वह एक दार्शनिक की भाँति विश्व के विकास का रहस्य उद्घाटित करती है। जीवन की सत्यता, नवीनता, तथा परिवर्तनशीलता का समर्थन कर कर्मशील बनाने केलिए मनु को वह उद्बोधन करती है। श्रद्धा **देव** पर मानवता के राज्य का निर्माण करने के लिए अभिप्रेरित करती और मानवता की श्रीवृद्धि केलिए मंगल कामना करती है।

3. नवीन मन्वन्तर का आरम्भ :-

श्रद्धा सर्ग में मनु और श्रद्धा का मिलन होता है, जो नवीन मन्वन्तर का आरम्भ है। मनु श्रद्धा का मूर्तिकरण दर्शात है–

और देखा बह सुंदर दृश्य

नयन का इन्द्रजाल अभिराम

कुसुम - भव में लता समान

चंद्रिका से लिपटा घनश्याम।

श्रद्धा मनु की दुर्वलता पहचान कर उनके प्रकार से मानव जीवन की सार्थकता समझाती है। दुख की रात बीत जाने पर वह नवल प्रभात विकसित होने की बात बाताती है। वह सुख और दुख से द्वंद्व से ही सृष्टि के विकास होने का सत्य कह उठती है। व्यथा से ही सुख पाप्ति होती है।

यही दुख - सुख विकास का सत्य

यही भूमा का मधुमय दान

× × × ×

व्यथा में नीली लहरों बीच

बिखरतें सुख मणि- गण द्यतुमान।

दु:ख तपस्या है और तपस्यापूर्ण जीवन आनन्दमय होता है। थकावट क्षणिक होती है और आनन्द सशक्त होता है। विश्व सदा परिव**र्तन** तथा विकासशील है। इस तथ्य को हृदयंगम कर मानव को सदा प्रगतिशील तथा विकासशील होना चाहिए : मनु की क्रियाशीलता में श्रद्धा अपना सहयोग प्रदान करने केलिए तत्पर रहती है। वह मनु के सामने अपना आत्म समर्पण करती है।

समर्पण लो सेवा का सार

सजल संस्कृति का यह पतवार

आज से यह जीवन उत्सर्ग

इसी पद वल में विगत दिकार।

श्रद्धा सर्ग में नवीन मानव – संस्कृति के निर्माण की प्रेरणा है। वासनामय देव संस्कृति विध्वंस होने पर मनु में निराशा के कारण जडता आ बैठती है। वे निराश एवं भयभीत होते हैं। श्रद्धा नवीन विजथिनी मानव संस्कृति के विकास की प्रेरण देती हुई कहती है– ''सष्टि के आदि पुरुष बनो। तुम्हारे द्वारा मानव – संसृति की बेलि फैल कर विश्व भर मानवता की सुरभि फैल जायेगी।''

बनो संसृति के मूल रहस्य

तुम्ही से फैलेगी यह बेल,

विश्व भर सौरभ के भर जाय

सुमन के खोलो सुन्दर खेल,

श्रद्धा सर्ग में कवि मानवता की विजय का संदेश देकर नये विकास की आकांक्षा रखते हैं। विजय का संदेश स्पष्ट रूप से व्यक्त हुआ है। सर्ग के अंत में कवि उद्घटित करते हैं–

विजयिनी मानवता हो जाय।

यहीं नवीन मन्वंतर का विकास प्रारम्भ होता है। प्रसादजी अपनी विश्व कल्पना की सुन्दर तथा महान अनुभूति यहाँ व्यक्त करते है। श्रद्धा सर्ग में मानवता के नव विकास की कामना प्रकट करते हैं। कामायनी का मूल संदेश विजयवाद श्रद्धा सर्ग में स्पष्ट रूप से व्यक्तहुआ है।

4. सौन्दर्य - चित्रण :-

श्रद्धा सर्ग में विषयवस्तु की प्रधानता के साथ काव्यकला की विशेषता का विशेष महत्त्व है। श्रद्धा कामगोत्रजा है। कामायनी है। कवि श्रद्धा का सौन्दर्य चित्रण अत्यंत सूक्ष्म, भावत्मक तथा उत्कृष्ट रूप से करते हैं। श्रद्धा की वाणी मनु को मधुकरी का मधुर गुंजार लगती है –

सुना यह मनु ने मधु गुंजार
मधुकरी का सा जब सानंद।

मनु सहर्ष सिर उठाकर निरखने लगते हैं–

निरखने लगे लुटे से, कौन-
गा रहा यह सुन्दर संगीत ?

श्रद्ध का सौंदर्य वर्णन एक दृश्य के रूप में हुआ है जैसे तुलसीदास ने सीता को – ''सुन्दरता को सुन्दर करहि'' कहा है। श्रद्ध का रूप एक सुन्दर इन्द्रजाल कहा गया है–

नयन का इन्द्रजाल अभिराम।

श्रद्धा की मधुमय वाणी तथा अनुपम रूप सैदर्य मनु के हृदय को झंकृत कर देते है। श्रद्धा की कोमल, मधुर तथा सुवासित देहकांति का मूर्तिकरण करते हुए कवि कहते हैं–

कुसुम कानन अंचल में मन्द
पवन प्रेरित सौरभ साकार

रचित परमाणु पराग शरीर

खडा हो, ले मधु का आधार।

नीले रोमोंवोले चमडे के वस्त्र के बीच में श्रद्धा का अधखुला कोमल शरीर, मेघों के समूह के बीज गुलाबी रंग धारण किये बिजली के फूल के रूप में बताया गया है–

नील परिधान बीच सुकुमार

खुल रहा मृदुल अधखुला अंग

खिला हो ज्यों बिजली का फूल

मेघ - वन बीच गुलाबी रंग।

श्रद्धा के रूप सौन्दर्य के चित्रण करने में कवि रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का सुन्दर समावेश करते हैं।

5. नाटकीय संरचना :-

श्रद्धा सर्ग का प्रारम्भ नाटकीय संरचना से हुआ है। श्रद्धा प्रश्न करती है–

''कौन तुम ?''

समापन भी श्रद्धा के विजयवाद की आकांक्षा से ही होता है–

विजयिनी मानवता हो जाय।

हिमगिरि पर बैठे मनु श्रद्धा के कोमल स्वर से आकर्षित हो सहर्ष सिर ऊपर उठाकर देखने का दृश्य अत्यंत नाटकीय है। फिर श्रद्धा का मनोहर रूपदर्शन तथा उन दोनों के बीच वार्तालाप अत्यंत नाटकीय विधान में हुआ है। प्रश्न और समाधान तथा विवरण होता रहता है। कथांश को जोडनेवाली केवल पाँच पक्तियाँ ही प्रंयुक्तहुई हैं –

(1) सुना यह मनु ने मधु गुंजार

(2) कहा मनु ने

(3) लगा कहने आगंतुक व्यक्ति

(4) लगे कहने मनु सहित विषाद

(5) कहा आगंतुक ने सस्नेह :

इन के अलावा कुछ इतिवुत्तत्मक पक्तियों भी प्रयुक्त हुई हैं। सारा सर्ग कथोपकथनात्मक शैली में अग्रसर होता है। संलाप – शैली प्रयुक्त होने के कारण श्रद्धा सर्ग में नाटकीयता आ गयी है।

अरे, तुम इतने हुए अधीर।

× × × ×

शक्तिशाली हो, विजयी बनो।

× × × ×

डरो मत अरे अमृत संतान ।

आदि अभिभाषणों में श्रद्धा के वचनों के द्वारा कवि मानव चेतना के विकास का सकेत करते हैं। उपर्युक्त संलाप बिलकुल नाटकीय शैली में ढ़ले हैं।

6. अलकार संयोजना तथा भाषा :-

अलंकारों के प्रयोग की दृष्टि से भी श्रद्धा सर्ग का विशेष महत्व है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

चद्रिका से लिपटा घनश्याम

× × × ×

खिला - हो ज्यों बिजली का फूल

आदि वर्णनों में उपमालंकर प्रयुक्त हुआ है।

'मेघ – वन', 'कुसुम – वैभव', 'घन– शावक' आदि प्रयोगों में रूपकालंकार का समावेश हुआ है। इनके अलावा उत्प्रेक्षा, मानवीकरण आदि अलंकारो का प्रयोग हुआ है।

श्रद्धा सर्ग की भाषा परिष्कृत तथा परिमार्जित है। भाषा में सहज संगीतात्मकता आयी है। मनु का पूछना और श्रद्धा का परिचय देना सहज होकर कलात्मक है। परिचय देना एक कला है जो श्रद्धा सर्ग में प्रयुक्त हुआ है। कवि ने यह संचरना विधान वाल्मीकि से ग्रहण किया जैसा लगता है। सर्ग की भाषा अत्यंत मधुर तथा प्रभावोत्पादक है।

7. उपसंहार :

श्रद्धा सर्ग में एक नवीन दर्शन की स्थापना हुई है। उसका महाकाव्य में विशेष महत्त्व है। श्रद्धा का मनोवेज्ञानिक और दार्शनिक निरूपण हुआ है। कविवर प्रसाद इस सर्ग में श्रद्धा का अत्यंत उदात्त चित्र अकित करते हैं। उस में अनेक मानवीय गुणों का समावेश हुआ है। प्रसाद ने इस सर्ग से श्रद्धा का जो वर्णन किया है उसका व्यापक प्रसार संपूर्ण काव्य में होता गया है। कुछ विद्वान श्रद्धा सर्ग को कामायनी महाकाव्य का मेरुदण्ड कहते है।

Lesson Writer

- डॉ. शेक मौला आली

राम की शक्ति पूजा

- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

3. 1

प्र. राम की शक्ति पूजा की समीक्षा कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. कथावस्तु
3. दार्शनिक विचारधारा
   - (क) शैव धर्म
   - (ख) शाक्तेय विचारधारा
   - (ग) योग
4. उपसंहार

1. प्रस्तावना :-

हिन्दी छायावादी काव्यधारा में सूर्यकान्य त्रिपाठी निराला जी का विशिष्ट स्थान है । वे प्रकृति के महान उपासक हैं। प्रकृति में वे परमात्मा को देखते हैं और परमात्मा में प्रकृति को देखते हैं। उनकी कविता रहस्यवाद में पल्लवित होती है और फिर कभी प्रगतिवाद में परिवर्तित होती है।

निराला जी बंगाल के रहनेवाले हैं। बंगाल में देवी की उपासना प्रधान होती है। निराला जी भी दुर्गा के उपासक हैं। उनके अनुसार सारा विश्व दुर्गा की दया, ममता, करुणा आदि से परिपूर्ण है। देवी सर्वशक्ति संपन्ना है। शिव जी भी देवी की महत्ता के कारण शक्ति संपन्न हुए हैं।

राम की शक्ति पूजा में सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला शक्ति की महत्ता रुपान्वित करते हैं। वाल्मीकि रामायण के अनुसार रावण का वध करने केलिए राम ने किसी शक्ति की पूजा नहीं की है। लेकिन शक्ति(देवी)की महत्ता और भी बढ़ाकर दिखाने केलिए निराला जी ने राम की शक्ति पूजा की रचना की।

2. कथावस्तु :-

राम और रावण का युद्ध चल रहा था। राम वडे ही संयमी हैं और विवेकपूर्ण भी हैं। वे महान वीर भी हैं। लेकिन रावण की वीरता के सामने वे ठहर नहीं पा रहे हैं। रावण अपराजय रहा है।

रह गया राम- रावण का अपराजेय समर

सारे वानर युद्ध के कारण विचलित हो रहे हैं। रावण लोहित (लाल) लोचन होकर और भी गर्जन कर रहा है। सुग्रीव, अंगद, गवाक्ष, आदि वानर मूर्छित हो गये हैं। लक्ष्मण चिन्ताग्रस्त हुआ है। हनुमान जी रावण पर आक्रमण करने के लिए युक्त होते हैं। माँ अंजना देवी आकर हनुमान जी को सचेत करती है कि -'जब तुम बालक थे तब सूर्य मण्डल पर तुमने आक्रमण किया। अब पुन: उस प्रकार की बालक चेष्टा न करो।' राम पहाड के ऊपर श्वेत मणि शिला पर बैठे हुए हैं।

राम सोचने लगते हैं कि उन्होंने ताटका, सुबाहु, विराध, खर, दूषण आदि अनेक राक्षसों का अन्त किया है। वे सीता को याद करके चिन्ताग्रस्त रहते हैं। रावण अट्टहास करके हँसता रहता है। सीता के नेत्रों से आँसू भी उभर आ जाते हैं।, वानरों की शक्ति न समा रही है। विभीषण भी वानरों की निस्सहायता पर वेदना प्रकट करता है। वानरों में सब से वृद्ध जाम्बवान राम को सचेत करते हुए कहते हैं- राम तुम देवी का स्मरण करो और शक्ति की कल्पना करो फिर उसकी पूजा करो।

राम हनुमान जी को बुलाते हैं और एक सौ आठ नील कमल लाने केलिए कहते हैं। तब वे दश भुजाओं वाली दुर्गा, महिषासुर मर्दिनी की आराधना में बैठ जाते हैं। वे आठ दिन तक दुर्गा माई की आराधना में बैठकर एक- एक कमल माँ के चारणों में अर्पित करते जाते हैं। सारे पुष्पों के बाद अन्त में एक पुष्प दिखाई नहीं देता तब राम कहते हैं, - हे दुर्गा माता बचपन में मेरी माँ मुझे राजीव नयन कहती थी। अब एक नील कमल दिखाई नहीं दे रहा है। अब कमल के स्थान पर मेरा दक्षिण नेत्र ले लो।'

कहती थी माता मुझे सदा राजीव - नयन
जो नील - कमल हैं शेष अभी यह पुरश्चरण
पूरा करता हूँ देकर मातः एक नयन।

राम अपना नेत्र निकालने केलिए तैयार होते हैं। दुर्गामाई का दर्शन होता है। उनके साथ लक्ष्मी, गणेशजी, कार्तिक और शंकर जी भी दर्शाते हैं। राम को विजयी होने का वर देकर राम के बदन में लीन हो जाती है।

3. दार्शनिक विचारधारा :-

राम की शक्तिपूजा में शैवधर्म, शाक्तेय विचार धारा और योग का समन्वय हुआ है।

(क) शैव धर्म :-

भारत में शैव धर्म और वैष्णव धर्म दो मार्ग दिखाई देते हैं। शैव धर्म आराधना प्रधान है जहाँ वैष्णव धर्म अर्चना प्रधान है। यहाँ निराला जी वैष्णव धर्म पर शैव धर्म का आधिपत्य बताना चाहते हैं। उनके अनुसार –

'शिवं करोति इति शिव:'

शिव का अर्थ आनन्द प्रदान करना है। शाक्तेय मार्ग शैव धर्म का भाग है। इसलिए निराला जी यहाँ शैव दर्शन प्रकट कर रहे हैं।

(ख) शाक्तेय विचारधारा :-

दर्शन में पुरुष तत्त्व और प्रकृति तत्त्व दो विचार धाराएँ हैं। पुरुष तत्व – परमात्मा नारायण हैं। प्रकृति तत्व– शक्ति या नरायणी है। आराधना विधान में प्रकृति तत्व की उपासना और पुरुष तत्व की उपासना दोनों चलते हैं। निराला जी छायावाद के प्रमुख कवि हैं। छायावादी विचार–धारा में प्रकृति तत्त्व अत्यन्त मनोज्ञ तथा रसाभिव्यक्तिमें अभिव्यजित होता है। इसलिए प्रकृति तत्त्व के उपासक के रुप मे निरालाजी 'राम की शक्तेपूजा' कविता यहाँ प्रस्तुत करते हैं।

(ग) योग :-

निराला जी यहाँ जीव तत्त्व पर चर्चा कर रहे हैं। प्रति जीव में या मानव में सतगुण और दुर्गुण दोनों होते हैं। दर्शनिक परिभाषा में ये ही लक्षण रामत्व और रावणत्व हैं। रामत्व दैवी संपत्ति हैं और रावणत्व आसुरी संपत्ति है। हर जीव में इन दोनों लक्षणों के बीच में संघर्ष चलता रहता है। आसुरी संपत्ति, दैवी संपत्ति को सदा कुचलती रहती है। दैवी संपत्ति पहले दबती है फिर किसी उपासना के आधार पर या उपासना के वल पर आसुरी संपत्ति पर विजय पाती है। 'निराला जी ने उस उपासना को राम की शक्तिपूजा रखा।'

4. उपसंहार :-

राम की शक्तिपूजा योग विद्या है, शाक्तेय दर्शन है और शैव दर्शन भी है। रामायण महाकाव्य है। महाकाव्य के एक अंश को लेकर निशला जी ने छायावादी विचारधारा में एक प्रकार से महाकाव्य ही रचा । कथा प्रवाह में, चरित्र- चित्रण में, भाषा के संविधान में और शैली के उपक्रम में निराला जी की रचना राम की शक्ति पूजा, निराली है।

निराला जी स्वयं महान योगी हैं। वे बडे उपासक हैं। शक्ति की पूजा - एक सौ आठ नील कमलों से राम करते हैं। ये कमल वैसे एक प्रतीक मात्र है। एक- एक कमल देवी की उपासना का बीजाक्षर है। निराला जी अपनी तपस्या को बीजाक्षर संयुत राम की शक्तिपूजा में निभाया है।

3. 2

'राम की शक्ति पूजा' के काव्य सौंदर्य का मूल्यांकन कीजिए ?

1. प्रस्तावना :-

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला हिन्दी साहित्य के 'युगान्तकारी कवि' हैं। उनकी रचनाओं में तत्कालीन मानव की पीडा, परतन्त्रता एवं परवशता के प्रति उत्पन्न तीव्र आक्रोश की ध्वनि सुनाई पडती है और विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करने की तीव्र गर्जना सुनाई पडती है । वे अपनी ओजस्वी कविता द्वारा ज्वालामुखी का विस्फोट करते हैं।

राम की शक्ति पूजा निराला जी की सर्वोत्कृष्ठ रचना मानी जाती है । इस काव्य में निरालाजी ने राम को परब्रह्म न मानकर एक वीर पुरूष के रूप में प्रस्तुत किया है। रावण का अन्त करने के लिए महाशक्ति की आराधना करनी पडती है । महाशक्ति की आराधना के द्वारा कवि ने तत्कालीन समाज को भी उन्होंने एक ऐसा संकेत दिया है कि राम की तरह एकाग्रचित्त होकर देशवासियों के हृदयों में महाशक्ति की आराधना द्वारा सुसंगठित हो 'शक्ति संचय' करके 'शक्ति' की सिद्धि प्राप्त करनी होगी। तभी भारतवासी सीता जैसी स्वतन्त्रता का उद्धार कर सकते हैं । इस काव्य में महाकाव्य की तरह उदात्त कल्पना है, प्रबन्ध पटुता है और कला कौशल है।

2. कथावस्तु :-

'राम की शक्ति पूजा' की कथावस्तु राम रावण युद्ध से सम्बन्धित है । राम अपनी पत्नी की विमुक्ति के लिए वानर, रीछ आदि की सेना के साथ लंका पर चढाई करते हैं। लक्ष्मण, नल, नील, हनुमान, सुग्रीव, अंगद, जाम्बवान, विभीषण आदि महान योद्धा राम की सेना में हैं। रावण के अनेक वीर मारे जाने पर रावण शक्ति की पूजा कर अधिक बल संचय करता है । फलत: राम के शस्त्रास्त्रों का रावण पर कोई प्रभाव नहीं रहता । एक दिन घोरयुद्ध में सन्ध्या समय रावण के भयंकर प्रहार से सुग्रीव, अंगद, नल, गवाक्ष आदि अनेक वानर वीर मूर्च्छित हो जाते हैं। लक्ष्मण के बाणों के प्रहार का भी रावण पर कोई प्रभाव नहीं पडता। केवल हनुमान का हुंकार सुनाई पडता हैं । सन्ध्या होने पर दोनों दल अपने अपने शिबिरों को लौट जाते हैं। राम भी खिन्न और उदास हो जाते हैं। प्रमुख सेनापति उनके पास आ बैठते हैं । अमावास्या का घना अन्धकार चारों ओर फैल जाता है। राम को विश्वास सा होता है कि सीता का उद्धार होना असम्भव है और रावण को जीतना असंभव है ।

राम, सीता का स्मरण करते हैं । पुष्पवाटिका का मिलन, धनुर्भंग एवं विवाह की घटनाएँ राम के हृदय में एक नया उत्साह उत्पन्न करते हैं । वे अपने दिल में बाणों का स्मरण करते हैं और – शक्ति का भी ध्यान आता है । राम के अश्रुपूरित नेत्रों को देखकर हनुमान रावण पूजित शक्ति को आत्मसात करने के लिए संपूर्ण आकाश को निगलने का प्रयत्न करते हैं । शिव प्रबोधित शक्ति अंजना के रूप में हनुमान को समझती हैं और हनुमान शान्त होते हैं।

राम की खिन्नता देख कर जाम्बवान शक्ति की मौलिक कल्पना कर युद्ध करने में संलग्न होते हैं । राम की आज्ञा पर देवीदह सरोवर से एक सौ आठ कमल पूजा के लिए लाते हैं। राम एकाग्रता के साथ शक्ति की आराधना में लीन हो जाते हैं। पाँच दिन बीत जाते हैं। छठे दिन राम का मन योगियों के आज्ञा नामक चक्र पर पहुँच जाता है। आठवें दिन राम के समीप शक्ति पर चढ़ाने के लिए एक कमल मात्र रह जाता है और वे सहस्रार को पार करने के लिए भी उद्यत हो जाते हैं। दो पहर की रात बीतने पर दुर्गामाई साकार रूप में प्रकट होकर पूजा का अन्तिम कमल उठा ले जाती है। हाथ बढ़ाने पर राम को कमल नहीं मिलता। वे अत्यन्त खिन्न हो, जानकी के उद्धार की बात सोचने लगते हैं। अचानक उन्हें स्मरण आता है कि बचपन में माता कौसल्या उन्हें 'राजीव–नयन' कहा करती थीं। तुरन्त राम हाथ में बाण लेकर कमल के स्थान पर अपना दाहिना नेत्र अर्पित करने के लिए उद्यत होते हैं।

ब्रह्माण्ड कम्पित होता है, तुरन्त देवी प्रकट हो जाती है और ''होगी जय। होगी जय! हे पुरुषोत्तम!'' कहती हुई वह अनन्त महाशक्ति राम के शरीर में विलीन हो जाती हैं।

2. कथानक के आधार :-

'राम की शक्ति-पूजा' कथानक पौराणिक है। युद्धक्षेत्र में राम की निराशा का मूल आधार वाल्मीकिं रामायण, अध्यात्म रामायण, रामचरितमानस आदि रामकाव्यों में विद्यमान है। वस्तुत: रावण के 'अण्टघण्टा शक्ति' के प्रहार से लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर राम नैराश्य रोदन करते हैं। वे कहते हैं ''बिना लक्ष्मण के मैं न रावण को जीत सकता हूँ और न सीता का उद्धार ही कर सकता हूँ। ''राम और कहते हैं,'' हर देशों में पत्नी (कलत्राणि) मिल सकती है, हर देश में मित्र तथा बन्धुजन मिल सकते हैं किन्तु सहोदर, भ्रता किसी भी देश में प्राप्त नहीं होता।''

देशे-देशे कलत्राणि, देशे-देशे च बान्धवाः।

तंतु देशे न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः॥

निरालाजी ने इस प्रसंग को परिवर्तित कर दिया है। कथानक पाँच भागों में विभक्त किया जा सकता है - (1) राम-रावण (2) राम का नैराश्य (3) हनुमान का महाकाश को निगलने का प्रयत्न करना। (4) राम की शक्ति की उपासना और (5) फलप्राप्ति।

4. प्रतीक योजना :-

'राम की शक्ति-पूजा' काव्य रामकाव्य की परम्परा में एक नया प्रयोग है। यह युग-चेतना को झकझोरनेवाला सशक्त काव्य है। तत्कालीन समाज में आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों से असंतोष व्याप्त था, प्रजा विदेशी दमन-नीति से भयभीत हो निराशाजन्य हुई थी। जनता को प्रोत्साहित कर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए आशाजन्य सन्देश देना कवि, निराला का उद्देश्य है। राम तत्कालीन देश-भक्त के प्रतीक है तो और राम की सेना देश की स्वतन्त्रता-सेना है।

इस के साथ-साथ राम की शक्ति-पूजा में योगदर्शन की झलक भी व्यक्त होती है। मूलाधार से लेकर षट चक्रों में जीव का संचार बनाया गया हैं। अन्त में आज्ञा चक्र और सहस्रार चक्र का अधिगमन होना बताया गया है।

क्रम-क्रम से हुए पार राम के पंचदिवस,
चक्र से चक्र मन चढता गया ऊर्ध्व निरलस।

× × × ×

संचित त्रिकुटी पर ध्यान द्विदल देवी-पद पर
जाए के स्वर लगा काँपने थर-थर अम्बर।

सम्पूर्ण कथानक का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि कवि निराला ने देवीभागवतपुराण, शिवताण्डव स्तोत्र, शिवमहिमास्तोत्र, वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, रामचरितमानस आदि विविध ग्रन्थराजों से सामग्री उपलब्ध करके 'राम की शक्ति-पूजा' प्रबन्धकाव्य की रचना की है। वाल्मीकि रामायण में युद्धकाण्ड के अन्तर्गत यह प्रसंग भी प्राप्त होता है कि राम रावण का संहार कर न पाते हैं, तो महर्षि अगस्त्य आकर 'आदित्य हृदय' उपदेश करते हैं। इस से भी संकेत मिलता है कि रावण-संहार के लिए राम ने किसी-न-किसी देवी शक्ति की उपासना अवश्य की थी।

5. पात्र तथा चरित्र-चित्रण :-

'राम की शक्ति-पूजा' के सारे पात्र पौराणिक हैं। निरालाजी ने राम, हनुमान एवं विभीषण का चरित्र-चित्रण नवीन विधान से किया है। निराला के राम को एक साधारण युद्धवीर के रूप में प्रस्तुत किया है। राम अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए और अपनी पत्नी सीता के उद्धार के लिए रीछ, वानर, भालू आदि की सेना के साथ लंका पर चढ़ाई करते हैं। विविध प्रयत्नों से भी राम रावण को जीत न सकते हैं। रावण के युद्ध कौशल के सामने राम की सेना ठहर न पाती। अत: राम भयभीत, चिन्तित तथा विचलित हो जाते हैं। राम को जीवन में प्रथमत: अपजय का आभास-सा होने लगता है।

स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता ऊग जीवन में रावण जय-जय॥

× × × ×

असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार-हार।

(क) राम :-

राम अपना पूर्व तथा अपूर्व पराक्रम याद कर लेते हैं - ताडका, सुबाहु, विराध, खर, दूषण, त्रिशिरा आदि-आदि क्रूर तथा भयंकर राक्षसों का वध किया था। लेकिन अब रावण के सामने उनका पराक्रम तूलिका बन जाता है जिससे उनके नेत्रों मैं आँसू छलछला आते हैं। रावण का अन्त न होने पर सीता का उद्धार कैसे हो

सकता है ? राम को रावण की दैवी-शक्ति के विरुद्ध युद्ध होगा। राम एक साधारण व्यक्ति की भाँति रोते हैं, फिर साहस, दृढ़ता और लगन के साथ युद्ध कौशल प्रदर्शित करते हैं। ने जाम्बवान की सलाह पर शक्ति की आराधना और उपासना में लीन हो जाते हैं। वे योगासन में बैठे हुए अपनी कठोर साधना के बल पर मूलाधार चक्र से लेकर क्रमशः सहस्रार तक सातों चक्रों को पार करते हुए उर्ध्वगमन करते जाते हैं त्रिकुटी में देवी के चरणों का ध्यान करते हुए जप में लग्न होते हैं। उनके जप से सारी लंका कम्पित होने लगता है।

यहाँ राम एक साधक, त्यागी तथा अपना सर्वस्व बलिदान करनेवाले महान पुरुष के रूप में प्रस्तुत हुए हैं।

(ख) हनुमान :-

'राम की शक्ति-पूजा' में दूसरा प्रधान पात्र 'हनुमान' हैं, जो सदा राम-भक्ति में तत्पर रहते हैं।

यत्र-यत्र रघुनाथ कीर्तनम्, तत्र-तत्र कृतस्तकांजलिम्।

भाष्पवारि परिपूर्णलोचनम् मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्॥

महाशक्ति के रावण का पक्ष लेने पर हनुबान तुरन्त उस महाशक्ति को परास्त करने के लिए तैयार हो जाते हैं। साथ ही वे महाकाश को निगल जाने को सन्नद्ध होते हैं। राम के दुःख का कारण पहचान कर उस दुःख के कारण का निवारण करना चाहते हैं। महाशक्ति माता अंजना का रूप धारण कर हनुमान को आशा देती है। तो ; वे अपना प्रयास छोड देते हैं। फिर राम की आज्ञा मिलने पर वे देवीदह सरोवर से वे एक सौ आठ कमल पूजा के लिए लाते हैं।

(ग) विभीषण :-

'राम की शक्ति-पूजा' में तीसरा उल्लेखनीय पात्र है विभीषण। वह राम का सच्चा सखा है, सुन्दर मंत्रणा देता है और उचित अवसर पर राम को प्रेरणा प्रदान करता है। विभीषण राम को प्रचोदन करके 'युद्धस्व विगतज्वरः' गीता वचन के अनुसार युद्ध के लिए प्रेरित करता है। विभीषण का-चरित्र नीति-कुशल, रण-कुशल तथा प्रेरणा-प्रदायक सच्चे मित्र के रूप में प्रस्तुत हुआ है।

6. भावपक्ष तथा कलापक्ष :-

(क) भावपक्ष :-

'राम की शक्ति-पूजा' काव्य से रावण के अजेय बने रहने पर राम का हृदय अत्यन्त व्यग्र हो जाता है।

निराशा ग्लानि तथा हतोत्साह के कारण वे चिन्ता–मग्न होते हैं, निराश एवं हताश राम को अचानक उपवन में सीता के प्रथम–दर्शन की याद आजाती है –

विदेह की - प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन

नयनों का नयनों से गोपन-प्रिय सम्भाषण॥

× × × ×

ज्योतिः प्रताप स्वर्गीय-ज्ञातछवि प्रथम स्वीय ;

जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कम्पन तुरीय ।

राम की यही स्मृति संचारी वीररस से परिपोषित होकर व्यक्त होती है –

सिहरा तन क्षणभर भूला मन लहरा समस्त,

हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा टस्त,

फूटि स्मिति सीता-ध्यान-लीन राम के अधर;

फिर विश्व-विजय-भावना हृदय में आयी भर;

यह स्मृति (याद) संचारी भाव पुनः शोक एवं व्यग्रता से परिपूर्ण होकर और भी हृदयविदारक बन जाता है, फिर कवि वीरता,तेजस्विता, ओजस्विता एवं अदम्य उत्साह से परिपूर्ण रौद्र रस की मनोहर झाँकी अंकित करते हैं । हनुमान रौद्र रूप धारण कर महाकाश को निगल जाने के लिए उद्यत होते हैं –

इस ओर रुद्र-वंदन जो रघुनंदन कूजित।

करने को ग्रस्त समस्त व्योम कपि बढ़ा अटल॥

कवि निराला विभीषण के मुख से विषण्ण राम के प्रति उद्‌बोधनकारी वाक्यों का प्रयोग करते हैं –

रघुकुल गौरव, लघु हुए जा रहे तुम इस क्षण
तुम फेर रहे हो पीठ हो रहा जब जय रण ॥

इसी प्रकार जाम्बवान के उत्साह एवं उमंग भरे ओजस्वी शब्दों में वीर रस की व्यंजना उल्लेखनीय है–

रघुवीर .....

आराधना का दृढ आराधना से दो उत्तर
तुम करो विजय संचत प्राणों से प्राणों पर ।

इस प्रकार राम की शक्ति पूजा लघु प्रबन्ध काव्यों में चिन्ता, स्मृति, शोक, विषाद, ग्लानि, उग्रता, आवेग, आदि विविध मनोभावों का मनोहर चित्रण हुआ है । वीररस इस काव्य का अंगीरस है ।

(ख) कलापक्ष :-

राम की शक्ति पूजा प्रबन्ध काव्य के रूप में लिखे जाने पर भी इसमें सम्पूर्ण राम कथा नहीं है । अब शास्त्रीय दृष्टि से इसे खण्ड काव्य कह सकते हैं । प्रबन्ध काव्य सर्ग बद्ध होना चाहिए । लेकिन यह काव्य एक ही सर्ग में अंकित हुआ है । काव्य के कथोपकथन मार्मिक हैं । सारे पात्र उत्तर की प्रतीक्षा न करके स्वत: अन्य पात्र को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान बोध करा देते हैं ।

समासान्त पदावली का प्रयोग होने के कारण भाषा की दृष्टि से यह काव्य सर्वथा नूतन है । 'राम की शक्ति पूजा' की भाषा बाणकृत कादम्बरी का स्मरण कराती है और यह प्रयोग हिन्दी काव्य क्षेत्र में नूतन एवं अद्‌भुत है । भाषा अत्यन्त प्रौढ़, परिमार्जित तथा सुसंकृत है। भाषा में ओजगुण की प्रधानता के साथ गौडी रीति का खुल कर प्रयोग हुआ है ।

निराला जी ने सादृश्यमूलक एवं विरोधमूलक अलंकारों द्वारा भावों के अत्यन्त मर्मस्पर्शी चित्र अंकित किये हैं । उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक, रूपक, मानवीकरण, उपमा, सन्देह आदि अलंकारों का काव्य में सुन्दर समावेश हुआ है । निम्न लिखित योजना व्यक्त होती है, कवि ने महिषासुर मर्दिनी, दुर्गा–पार्वती की कल्पना की है ।

गरजना चरण प्रान्त पर सिंह वह नहीं सिन्धु
दशदिक-समस्त हैं हस्त और देखो उत्पर,
अम्बर में हुए दिगम्बर उचित शशि-शेखर ।
लख महाभाव-मंगल पदतल धँस रहा गर्व
मानव के मन का असुर मन्द, हो रहा खर्व ॥

छन्द की दृष्टि से राम की शक्ति पूजा में कवि ने मात्राओं के गतिशील एवं स्वरायुक्त नवीन छन्द का प्रयोग किया है । जिसमें ओजपूर्ण भावों को चित्रित करने की अद्‌भुत क्षमता है ।

7. निष्कर्ष :

'राम की शक्ति पूजा' लघु प्रबन्ध काव्य है । इसमें उच्चकोटि का गाम्भीर्य, ओज एवं औदात्य विद्यमान हैं। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार यह अलंकारिकता प्रधान उदार काव्य है । इस काव्य में कवि के जीवन की अनुभूति, निराशा, पराजय, संघर्ष और विजय कामना नाटकीय विधान में अंकित किये गये हैं । साहित्यिक गरिमा, चित्रण कौशल एवं अनुभूति की उत्कृष्टता के कारण राम की शक्ति पूजा लघुकाव्य में महाकाव्य का सा गम्भीर्य विद्यमान है । महाकाव्यों की शैली पर किया गया यह काव्य एक नवीन प्रयोग है।

* * * * *

Lesson Writer

- डॉ.शेख मौला आली

तारापथ

- सुमित्रानंदन पंत

नौका - विहार

4. 1

'नौका विहार' कविता का सारांश लिखकर विशेषताएँ बताइए ।

1. प्रस्तावना :

छायावादी कविता धारा में सुमित्रानंदन पन्त का विशिष्ट स्थान है। उनकी काव्य प्रेरणा पर प्रकृति और पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव निरीक्षण से प्राप्त हुई है। जिसका श्रेय उनकी जन्मभूमि कूर्मांचल को है । इनके अतिरिक्त माता का स्वर्गवास, असहयोग आन्दोलन और असफल प्रेम आदि भी पंत जी की काव्य प्रेरणा के भागी है ।

वीणा, ग्रन्थि, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, उत्तरा आदि पंतजी की काव्य-कृतियाँ हैं ।

नौका विहार कविता गुंजन की कविताओं में से है । यह पंत जी की उत्कृष्ट रचना मानी जाती है । कविता के वर्ण्य विषय को कवि ने प्रकृति की पोशाक पहना कर और अध्यात्मिकता का पुट देकर बहुत ही सरस तथा गम्भीर बना दिया है, कवि नाव में गंगा में विचरने लगते हैं ।

आकाश में शान्त, स्निग्ध तथा उज्ज्वल ज्योत्स्ना फैली हुई है । नक्षत्र ऐसा चमक रहे हैं मानो आकाश के अनन्त नेत्र पूर्ण शान्ति से मुक्त पृथ्वी को देख रहे हैं । सैकत शय्या (तालू की शय्या) पर ग्रीष्म-ऋतु की दुग्ध धवल,विरल तथा तन्वंगी गंगा गर्मी की नजर से थक कर, दु:खी हो और निश्चल रूप से लेटी हुई है । गंगा तापसबाला की तरह निर्मल है, चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब ऐसा दिखाई दे रहा है, मानो वह गंगा रूपी रमणी का सुन्दर मुख हो, चान्दनी की शोभा से गंगा की धारा रूपी हथेलियाँ चमक रही हैं, उसके हृदय पर लहरा रही हैं । उसके गोरे अंगों पर नक्षत्रों से चमकता हुआ आकाश रूपी सुन्दर और तरल नीला वस्त्र चंचल हो सिहर-सिहर कर लहरा रहा है । गंगा की लहरों पर चन्द्रमा की चाँदनी फैली हुई है वह लहरों के साथ ही घटती और बढ़ती रही है, मानो गंगा रूपी बाला की साडी की वह सिकुडन हैं ।

चाँदनी रात का प्रथम पहर था । कवि शील ही नाव लेकर चल पडे । चाँदनी में बालू चमकती सी लगती थी । जिस पर मोती के समान चाँदनी की शोभा निखरती थी । देखते-देखते ही नावों पर पालें चढ़ा दी गई और लंगर उठा दिया गया । पाल रूपी पंख को खोल कर वह हँसिनी सी सुन्दर नाव मनोहर गति से धीरे-धीरे पानी पर तिरने लगी । जल स्थिर था । जल रूपी निर्मल दर्पण में चाँदी के समान श्वेत किनारे प्रतिबिम्बित होकर थोडी देर के लिए दुगुने आकार में दिखाई देने लगें । कालाकाँकर का राजभवन जल में निश्चिन्त सोया सा लगता था, क्योंकि उसका प्रतिबिम्ब पानी में दिखाई देता था । वह राजभवन मान अपनी पलकों में अपने वैभव के गहरे स्वप्न संजोकर जल में निश्चिन्त और प्रसन्न सो रहा हो ।

जल प्रवाह में नाव की गति के कारण हिलारें उठती थीं जिनमें प्रतिबिम्बित आकाश ऐसा जान पडता था, मानो आकाश के ओर छोर हिल रहे हैं । नक्षत्रों का ज्यातिपुंज गंगा के जन में ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो तारों का समूह स्थिर होकर अपलक दृष्टि से जल के हृदय में प्रकाश फैलाए कुछ खोज रहा हो । नक्षत्रों के उन छोटे छोटे दीपकों को अपने चंचल अंचल की ओर में करके लहरें क्षण-क्षण लुकती छिपती फिर रही हैं । सामने ही शुक्र नक्षत्र की शोभा झिलमिल चमक रही है । वह शोभा ऐसा दिखाई देती है कि कोई में स्वयं को छिपा कर तैर रही हो । दशमी का चन्द्रमा अपने तिर्यक (टेढ़े)मुख को मुग्धा नायिका की तरह रुक-रुक कर लहरों के घूँघट में छिपा छिपा कर दिखा रहा है ।

चंचल लहरों के कारण चंचल बनी हुयी कवि पंत की नाव नदी की धारा के बीच पहुँच गई । रात का अधिक अन्तर होने के कारण और चाँदनी में चमकता हुआ गंगा का किनारा आँखों से ओझल हो गया था । इस स्थिति होने के कारण गंगा के दोनो ओर के किनारे दो बाहुओं की भाँति धारा के कृश तथा कोमल शरीर का आलिंगन करने के लिए अधीर से लग रहे थे । बहुत दूर क्षितिज पर खडा हुआ वृक्ष का मालाकार समूह भौंह की तरह टेढ़ा सा दिखाई देता था । नक्षत्रों से भरा आकाश ऐसा लग रहा था, मानो वह नक्षत्र रूपी अपने असंख्य नीलनेत्रों से निर्निमेष दृष्टि से विशाल भूमण्डल को देख रहा था । माँ के हृदय पर सोये शिशु की तरह धारा के बीच एक द्वीप सोया हुआ था। जिस से टकराकर गंगा का प्रवाह विपरीत दिशा में बहने लगा था। आकाश में उडनेवाला वह पक्षी कौन है? क्या वह विरह-व्यथित कोक पक्षी है जो जल में अपने प्रतिबिम्ब को अपनी प्रेमिका कोकी समझकर अपने विरह-व्यथा से मुक्त होने के लिए उडकर उसके पास जाना चाहता है।

नाव का बोझ हलका होने से कविने पतवार घुमा दिया हैऔर धारा के विपरीत चलने लगी धारा में चलती हुई नाव ऐसी प्रतीत होती थी मानो डाँडों की चंचल हथेलियाँ फैला कर और उन में फोन रुची मोतियों को

भर कर वह उन्हें जल में बिखरा कर उनके तारों के हार बनाने लगी थी। तरल और तरल चाँदी के सर्पों जैसी चंचल किरणें रेखाओं की भाँति खिंच खिंच कर जल में चमकती हुई नाच रही थी । लहर रूपी लतिकाओं चन्द्रमा और नक्षत्रों के रूप में असंख्य फूल खिलकर फेनों से पूर्ण जल में विलीन हो रहे थे । अब नदी की धारा गहरी न रह गयी। अत: कवि आसानी से लकडी लग्गी से पानी की था (गहराई) लेते हुए उत्साह के साथ घाट की ओर नाव बढ़ चले।

नाव ज्यों-ज्यों किनारे पर लगती जगती थी, त्यों-त्यों हृदय में रात-रात विचार उत्पन्न होते जाते थे। मानव जीवन गंगा की धारा के समान है। जिस प्रकार नदी की धारा समुद्र में जा मिलती है उसी प्रकार जीव परमात्मा से जा मिलता है। जिस प्रकार आकाश का नील पन, चन्द्रमा की चाँदी-जैसी रजत हँसी तथा लघु लहरों का आनन्दमय विलास शाश्वत हैं उसी प्रकार जीवन का सुख-दुख तथा उल्लास संसार में सदैव विद्यमान रहते हैं। हे जग-जीवन के कर्णधारा जन्म-मरण के अस्पार जीवन का नौवन-विहार भी शाश्वत है। अर्थात जन्म के पश्चात् मृत्यु और मृत्यु के पश्चात है। अर्थात जन्म के पश्चात् मृत्यु और मृत्यु के पश्चात जन्म जीवन का अटल धर्म हैं।

कवि यहाँ कहते हैं- ''नौका-विहार के आनन्द में मैं अपना अस्तित्व-ज्ञान खो बैठा हूँ। किन्तु थट जीवन का चिरन्तन् प्रमाण। यह जीवन का वास्तविक रूप प्रस्तुत करता और मुझ को अमरत्न-प्रदान करता हैं।''

3. समीक्षा :-

गंगा का तापस बाला के रूप में अत्यन्त भाव व्यंजन चित्रण हुआ है। गंगा मनानवीकरण छायावादी प्रवृत्ति के अनुरूप है। चाँदनी रात का वर्णन यथार्थ एवं काव्यात्मक है। चाँदनी रात का वर्णन, यथार्थ एवं काव्यात्मक है। मृदु मन्द-मन्द मत्थर-मत्थर में नाव की गति का साकारचित्रण हुआ है। जल में आयु किरणों चाँद के सर्पों की रलमल बनाना अत्यन्त भावपूर्ण, सरल एवं सूक्ष्म कल्पना है। नौकाविहार की जीवन-धर्म के साथ धार्मिक सापेक्षता बतायी गयी है। अद्वैतवादी दर्शन की पुष्टि हुई है।

सांगरूपक, समुच्चय, छेकानुप्रास, उपमा, पुनरुक्ति, रूपक, उत्पेक्षा आदि अलंकार प्रयुक्त हुए हैं।

नौक-विहार कविता भावपक्ष तथा कलापक्ष की दृष्टि से सफल तथा उत्कृष्ट कविता है।

Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

* * * * *

4. 2

'ताज' कविता में पल्लवित पंत जी की भावनाओं को व्यक्त कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'ताज' कविता सुमित्रानन्दन पन्त की प्रगतिवादी विचारधारा को लेकर-चलती है। ताज को आधार बनाकर पंतजी शोषकों की भर्त्सना करते हैं और कवि का आक्रोश व्यक्त होता है।

2. सारांश :-

पत्नी मुमताज की स्मृति में बादशाह शाहजहाँ ने प्रेम के प्रतीक तथा कला अतुलनीयता में ताजमहल का निर्मण कराया उस पर पंतजी अपनी भावनाएँ व्यक्त करते हैं -

जग (देश) में के जन निर्जीव तथा विषण्ण पडे हुए हैं। सारे प्राणी दरिद्रता के कारण कंकाल बने हुए हैं। शाहजहाँ ने संगमर्मर का भव्य महल 'ताज' बनाया है। मृत्यु का इस प्रकार अमर तथा अपार्थित (अलौकि) करना ठीक नहीं। ताज के निर्माण के द्वारा मृत्यु का सुन्दर शांगन (श्रृंगार) किया गया है। दूसरी और संसार में नग्ता, क्षुधातुर (भूखे), निराश्रित दरिद्र प्राणिहीन दीन तथा नैराश्य जीवन बिना रहे हैं।

हे मानव! जीवन के प्रति ऐसी उदासीनता उचित नहीं। ताज के निर्माण के द्वारा जीवित आत्मा का अपगान किया गया है तथा प्रेत एवं छाया (प्रेतात्मा) के प्रति प्रेम व्यक्त किया गया है। क्या प्रेम की अर्चना (पूजा) यही है कि हम मरण का वरण केरं? सजीव प्राणियों की उपेक्षा कर मृत प्राणियों की अर्चना करें? जीवित प्राणियों का शोषण कर, उनको कंकाल बनाकर क्या उन से जीवन का प्रांगन भरें न क्या जीवित प्राणियों को यातनाएँ देकर मार डाले? क्या यह शोभा-जनक है?

हमें जीवित मानव का आदर करना चाहिए, मृत व्यक्ति का नहीं। क्या हम शव को मानव का रूप रं, ''आदर आदि दे सकते हैं? और मानव को हम शव का कुत्सित (घृणित) चित्र बना दें? हे ताजमहल तुम तो अवश्य मनोहर हो। लेकिन तुम में युग-युग के मृत आदर्श भी निहित हैं। तुम में शावाराधना की रूढियाँ बैठ गयी हैं। जिनके हृदय में प्रेम का मोहान्ध होता है, वे तुम्हारी प्रशंसा करते हैं। तुम से प्रेरणा प्राप्त कर वे लोग अज्ञानकरा मृतकों को प्रेम करने की तथा जीवितों की उपेक्षा करते रहते हैं।''

हम जीवन का अमर तथा शाश्वत संदेश भूला चुके हैं। इसी कारण मृतकों के प्रति आस्था मन में उत्पन्न होती है। मृतकों को वही मानव प्रेम करेगा जो स्वयं मरा हुआ है, जिस में ज्ञान की दीप्ति नहीं है। जीवित व्यक्ति

की परमात्मा की सच्ची विभूति है। जीवित व्यक्ति की संक्षेम ध्यान में रखना सच्ची मानवता है और परमात्मा के प्रति अपनी आस्था प्रकट करना है।

3. समीक्षा :-

'ताज' कविता में कवि सुमित्रानन्दन पन्त की क्रनित विचारधारा प्रकट हुई है। सामाजिक शोषण प्रवृत्ति के प्रति कवि का अथाह विद्रोह स्पष्ट है। कवि सामाजिक शोषण की भर्त्सना करते हैं। मृतकों की आराधाना मृतक ही करते हैं और जीवितों की रक्षा ईश्वर करता है।

'ताज' पंत जी की प्रगतिवादी विचारधारा की कविता है।

4. 3

'भारतमाता' कविता में अभिव्यक्त सुमित्रानन्दन पंत जी की देश-भक्ति (देश-प्रेम) का विवरण दीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'भारतमाता' कविता की रचना सन् 1940 ई. में हुई है। कविवर पंत ने इस कविता में अपनी देशभक्ति की अभिव्यक्ति की है। भारत की प्राकृतिक छटा अनुपम तथा अपार है। किन्तु दुर्भाग्यवश भारत दीनता एवं दरिध्रता का निलय भी बना हुआ है।

2. कविता का सारांश :-

भारतमाता ग्रामवासिनी है। धूल भरा मैला-सा अंचल खेतों में फेला हुआ है। फसलों से सरे हुए खेत लह-लहाते रहते हैं। गंगा और यमुना नदियों में भारतमाता का आँसू-जल प्रवाहित होता रहता है। यह मिट्टी की प्रतिमा है। और सुख-दु:ख आदि विरोधी भावों से सदा उदासीन रहती है। भारतमाता दीनता के कारण जडीभूत हो रहती है। भारतमाता दीनता के कारण जडीभूत हो गयी है। दया दृष्टि की आशा से दूसरों की ओर नत (सिर झुकाकर) एकटक देखती रहती है। उसके ओटों पर चिर नीश्व (निश्शब्द) रोदन व्यक्त होता रकहता है। युग-युग के अन्धकार-रूपी अज्ञान से माता का विषण्ण (दु:खी) हुआ है। सारी सुण्व-सुविधाओं से वह वंचित है। भारतमाता अपने ही घर (देश) में प्रवासिनी भारतमाता की तीस कोटि (तीस करोड) 1940 में भारत के। जनता तीस करोड थी।) सन्तान नग्न तन से है। भारत के लोग अध-भूखे, शोषित, साधनहीन, मूर्ख, असभ्य, अशिक्षित एवं निर्धन हैं। भारतमाता निरादर के कारण नत-मस्तक हो तरूतण निवासिनी बन गयी है। भारतमाता शरदेन्दु-हासिनी। शरदकालीन स्वच्छ चन्द्रमा की भाँति निर्मल हँसीवाली है। भारत की सुनहली

फसल (स्वर्ण शस्य) दूसरों के चरणों से लुण्ठित (टूटी हुई) है। भारतमाता का मन धरती के समान सहनशील है। निरन्तर अत्याचारों के कारण उसका मन सदा कुण्ठित (दु:खी) है। दु:खाधिक्य के कारण वह क्रन्दन करती है और कम्पित भी होती है। भारतमाता के अधरों की मुस्कान मौन हो गयी है। शारद-कालीन स्वच्छ तथा निर्मल चन्द्रमा जैसी हँसी विदेशी शासक-रूपी शहुने ग्रस लिया है।

भारतमाता का भृकुटि-रूपि क्षितिज तिमिरांकित हुआ है। अंधकार-रूपी दु:ख ने ग्रस लिया है। दु:ख के कारण भारतमाता के नयन नमित (झुके हुए) हैं। उसका हृदय रूपी आकाश निराशारूपी वाष्प (भाप) से ढ़का हुआ है। दु:ख के कारण उसके मुख की शोभा नष्ट होकर कालिमा से पुत गयी है। भारतमाता का तप और संयम सफल हुआ हैं।

अमृत समान अहिंसा का स्तन्य (दूध) वह संसार को पिला रही है। जनता के मन का भय और सांसारिक अज्ञान और भ्रम का हरण वेट कर रही है। भारतमाता जग-जनती है और स्रे लोगों के जीवन विकसिनी है।

3. समीक्षा :-

श्यामल अच्छी फसलों का गुण है। यहा भारतमाता की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण हुआ है। तरु तत निवासिनी - भारत के अनेक लोग पेडों के नीचे निवास कर रहे हैं। विदेशी शासकों के अत्याचारों के कारण भारतवासी दबे हुए थे। पंतजी कविता का समापन गाँधीवाद से करते हैं।

उपमा, रूपक तथा रूपकातिशयोक्ति अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

पाठ : द्रुत झरो

4. 4

सुमित्रानन्दन पन्त कृत 'द्रुत झरो' कविता की समीक्षा कीजिए।

द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र कविता 'युगांत' में से है। ये कविता पंतजी की परिवर्तित विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है। कवि पुरानी परम्पराओं को त्याग कर नवीन चेतना को आमन्त्रण देते हैं।

सारांश :- कवि कहते हैं -

''हे जगत के जीर्ण, त्रस्त, ध्वस्त और शष्क (सूखे) जीर्ण पत्र। तुम शीघ्र ही झर जाओ, ताकि तुम्हारे स्थान पर नये और कोमल पत्ते उमर आयें। तुम शीत और ताप (गर्मी) का प्रभाव न सह सकने के कारण पीलें पड गये हो। तुम वसन्त ऋतु की वायु से डरते हो, क्यों कि वह जीर्ण पत्रों को झाडकर उनके स्थान पर नये पत्तें को जन्म देती है। किसी से भी तुम्हारा रागात्मक सम्बन्ध नहीं। इसी कारण तुम जड और पुराचीन (बहुत पुराने) पड गये हो।''

भूतकाल निर्जीव तथा मृत (मरे हुए) विहंग (पक्षी) के समान है। वे अब तक इस संसार में अपना घोंसला बनाये हुए हैं। किन्तु उन में बोलने की शक्ति नहीं। दुर्बलता के कारण वे श्वासहीन बन गये हैं। अत: उन घोंसलों (शीरीरों) को छोड देना ठीक है। प्राचीन परंपरा (Tradition) रूपी मृत पक्षी के पंखटूट कर अस्त-व्यस्त हो गये हैं। इसलिए झर-झर कर अनन्त में विलीन हो जाना ही विश्व के लिए कल्याणप्रद है। सामाजिक विकास के लिए प्राचीन परंपरागत विषयों को त्याग कर नये जीवन-विधान को अपनाना चाहिए।

जिस प्रकार पुराने पत्तों के झंड जाने पर उनके स्थान पर लाल-लाल नव अंकुर उमर आते हैं, उसी प्रकार प्राचीन रूढ़ियों (Conservatism) के समाप्त होने पर विश्व के शरीर जो कंकाल-जाल (जो कंकालों का समूहरह गया है, पुन: नवल (नया) रूधिर (रक्त) प्रवाहित होगा। जीवन की मांसल (स्वस्थ) हरियाली में आनन्दमय मर्मर मुखरित होगा।

नवीन परम्परा इस संसार को पुन: नवीन मनोहर प्रेरणा देगी। फूले-फूले और नव-जीवन-पूर्ण विश्व के यौवन (वसंत) में जागृत हो कर संसार-रूपी मनवाली कोयल (पिक) आनन्दोत्साह से कूल उठेगी। निज (अपने) उमर प्रणय के स्वर की मदिरा से नवयुग की पुन: भर जायेगी। सारा संसार सुख-संपन्नता से सर्वत्र आनन्दोत्सनव मचायेगा।

3. समीक्षा :-

पंतजी यहाँ प्राचीन रूढ़ियों के स्थान पर नवीन भावनाओं वग समावश चाहते हैं। भूतकाल विगत तथा निस्सार बताया गया है। कवि प्राचीन रूढ़ियों तथा परम्पराओं के विरुद्ध व्यापक विद्रोह करते हैं। प्राचीन परंपराओं को जीर्ण पत्र तथा मृत विहंग कहते हैं।

प्राकृतिक-विकास मानव-चेतना के विकास के प्रतीक माना गया है।

छेकानुप्रास, समासोक्ति, यमक, रूपक आदि अलंकार प्रयुक्त हुए हैं।

इस कविता में पंत जी की 'प्रगतिवादी' विचारधारा प्रकार होती है।

4. 5

पंत के 'प्रकृति-चित्रण' पर प्रकाश डालिए।

(अथवा)

सुमित्रानन्दन पंत की कविता में पल्लवित 'प्रकृति-चित्रण' पर विचार कीजिए।

1. प्रस्तावना :- प्रकृति से कवि का सम्बन्ध।

श्री सुमित्रानन्दन पन्त प्रकृति के सुकुमार कवि हैं। प्रकृति के आलम्बन में आबद्ध होकर नारी के रूप-वैभव को भी उन्होंने ठुकरा दिया था। विश्व के अनेक कवियों ने प्रकृति का चित्रण अपने-अपने काव्यों में किया है। किन्तु प्रकृति के प्रति जैसा गहरा अनुराग में किया है। किन्तु प्रकृति के प्रति जैसा गहरा अनुराग महाकवि पंत का परिलक्षित हुआ है, वैसा किसी अन्य कवि में दुग्गोचर नहीं होता। प्रकृति उनके लिए काव्य की वस्तु और उनकी साज-सज्जा का साधन ही नहीं, अपितु, उनकी काव्य-प्रेरणा का स्रोत भी रही है। इस सम्बन्ध में पंतजी का स्वयं कथन है - कविता करने की प्रेरणा मुझे सब से पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली। जिसका श्रेय मेरी जन्म-भूमि कूर्मांचल प्रदेश को है। कवि-जीवन से पहले भी, मुझे याद है, मैं घण्टों एकान्त में बैग, प्राकृतिक दृश्यों को एकटक देखा करता था और कोई अज्ञात आकर्षण मेरे भीतर एक अव्यक्त सौन्दर्य का जल बुनकर मेरी चेतना को तन्मय कर देता था। जब कभी मैं आँखें मूंद कर लेटता था, तो वह दृश्यपट मेरी आँखों के सामने घमा करता था और वह शायद पर्वत-प्रान्त के वातावरण ही का प्रभाव है थि मेरे भीतर विश्व और जीवन के प्रति एक गम्भीर आश्चर्य की भावना, पर्वत की तरह निश्चय रूप में उपस्थित है।

2. प्रकृति चित्रण के विविध रूप :-

कवि पन्तजी प्रकृति की रमणीय एवं सुकुमार रूप-धनि पर विमुग्ध रह हैं। उनकी कल्पना का श्रृंगार प्रकृति ने किया है, उनके काव्य उपकरणों को प्रकृति ने राजा या हैं युनकी मनोरम भाव-मूर्तियों के लिए सौन्दर्य सामग्री का संकलन प्रकृति ने ही किया है और उनको काव्य की प्रेरणा प्रकृति ने ही दी है।

आधुनिक युग में प्रकृति चित्रण की विविध प्रणालियाँ प्रचलित हैं। वर्तमान का कवि प्रकृति को काव्य का मूलाधार मानता है और प्रकृति के माध्यम से ही अपनी कमनीय कल्पना अभिव्यक्त करता है। आधुनिक

काव्यों में प्रकृति-चित्रण दस रूपों में हुआ। (1) आलम्बन रूप में (2) उद्दीपन रूप में (3) संबोधनात्मक रूप में, (4) वातावरण-निर्माण के रूप में, (5) रहस्यात्मक रूप में, (6) प्रतीकात्मक रूप में, (7) अलंकार-योजना के रूप में (8) मानवीकरण के रूप में, (9) लोक-शिक्षा मेन और (10) दूती का रूप में।

1. आलम्बन रूप में :-

प्रकृति का आलम्बन रूप चित्रण दो प्रकार से किया जाता है - (1) प्रकृति संश्लिष्ट एवं अत्यन्त भव्य चित्र भक्ति करना। इस में प्रकृति अलौकिक रमणीयता के साथ अपने पूर्ण एवं समग्र रूप में अंकित की जाती है। (2) प्रकृति का स्वतन्त्र एवं आलम्बन रूप में चित्रण। इस में केवल प्राकृतिक पदार्थों के नाम गिना दिये जाने हैं। उन नामों की गणना द्वारा अर्थ-ग्रहण मात्र कर दिया जाता है। पन्तजी के काव्यों में उक्त दोनों प्रणालियों का प्रयोग हुआ है। 'बादल', 'आँसू', 'वसन्त श्री', 'गुंजन', नौकाविहार आदि कविताओं में उनके संश्लिष्ट-चित्रों की भरमार द्रष्टव्य है। उदाहरण के लिए 'आँसू' कविता में अंकित कवि का संश्लिष्ट चित्र देखिए -

बादलों के छायामय-मेल, घूमते हैं आँखों में फैल।
अंबर और अंबर के खेल, शैल में जलद में शैल।

'ग्रामश्री' कविता में कवि विविध फलों के नाम गिनते हैं -

महँके कटहल, मुकुलित जामुल, जंगल में झरबेरी झूली
फूले झाड़ू, नींबू, दाडिन, आलू, गोभी, बैंगन मूली।

2. उद्दीपन रूप में :-

मानवीय भावनाओं को जहाँ प्रकृति उद्दीपन करती है, वहाँ कवि का प्रकृति चित्रण 'उद्दीपन' के रूप में कहलाता है। पंतजी की निम्नांकित पंक्तियों में विरह-वेदना का उद्दीपन उषा की आशा, सन्ध्या की उदासी, की आधारित और सौरभ-समीर की गण्डी सांसों से सिखाया गया है -

कब से विलोकित तुम को, उषा के वातायन से।
संध्या उदास किरजाती, सूने गृह के आंगन से॥
लहरें अधीर सरसी में, तुम को तकती उठ-उठ कर।
सौरभ समीर रह जाता प्रेयसि! ठंडी साँस भर कर॥

वियोग की भाँति मिलन की मधुर वेला में भी कवि को प्रकृति के कण-कण में अपनी भावनाओं का

प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। प्रथम समागम की वेला में नववधू की मूकता और लज्जा के भार से उसे सारी प्रकृति मौनसी, झुकी हुई –सी प्रतीत होती है।

आज छाया चहुँ दिशि चुपचाप, मृदुल मुकुलों का मौनालाप।

रूपहली कलियों से कुछ लाल, लद गई पुलकित पीयल डाल॥ और

वह पिक की कर्म-पुकार, प्रिये झर-झर पड़ती साभार।

लाज से गडी न जाओ प्राण, मुस्कार दी क्या आज विहान।

3. संवेदनात्मक रूप में :-

प्रकृति के संवेदनात्मक रूप का चित्रण काव्यों में दो रूपों में प्राप्त होता है। प्रकृति जहाँ मानव के हास, उल्लास, आनन्द एवं मनोरंजन के समय उनभावनाओं को प्रकट करती हुई अंकित की जाती है, वहाँ मानव के शोक, विषाद, रूदन एवं अवसाद के क्षणों में स्वयं अश्रुधारा को साथ चित्रित की जाती है। दोनों जगह प्रकृति का संवेदनात्मक रूप प्रकट होता है। 'मिलन' कविता में हास, उल्लास एवं आनन्द के क्षणों में प्रकृति को भी आनन्द–उल्लास में निमग्न करके कवि की कलम चलती है –

जब मिलने मौन नयन मल भर, खिलखिल अपलक कलियाँ निर्भर, देखती मुग्ध, विस्मित, नभ पर, तुम मदिराधर पर मधुर अधर –

पंत जी ने प्रकृति को शोक, विषाद एवं रुदन के क्षणों में अत्यधिक विषाद एवं खिन्नता के साथ अश्रुपात करते हुए अंकित किया है। उन्होंने परिवर्तन 'कविता' में संसार की अचरिता देख कर पवन को निःश्वास भरते हुए दिखाया है, समुद्र को को सिसकियाँ भरते और नक्षत्रों को सिहरते हुए बताया है।

अचरिता देख जगती की आप, शून्य भरता समीर निःश्वास,

डालता पातों पर चुपचाप, ओस को आँसू नीलाकाश,

सिसक उग्ता समुद्र का तन, सिहर उठते उडुगन।

4. वातावरण निर्माण के रूप में :-

इस रूप में प्रकृति–चित्रण दो प्रकार से किया जाता है। (1) गम्भीर वातावरण तथा (2) उल्लापूर्ण वातावरण। कवि ने सन्ध्या के बाद कविता में अत्यन्त गम्भीर वातावरण का वर्णन किया है –

बिरहा गाते गाडी वारे, भूँक भूँक कर लडने कूकर, हुआ हुआ करते सियार देते विषण्ण निशि बेला कोस्वर।

मधुर-मिलन के आनन्दपूर्ण श्रणों का वातावरण निर्माण करने के लिए, प्रकृति-चित्रण की प्रणाली भी कवि के रची है। 'ग्रन्थि' कविता में नाव डूबने पर अचानक प्रिया से मिलन होने की आनन्दपूर्ण घटना का वर्णन वसन्त की मादक बेला के वर्णन के साथ हुआ है -

जानकर ऋतुराज का नव आगमन,

अखि कोमल कामनाओं अवनि की

खिल उठी थीं मृदुल सुमनों में कई

सफल होने की अवनि में ईश से।

5. रहस्यात्मक रूप में :-

आधुनिक कवियों ने प्रकृति को एक अगोचर एवं अव्यक्त सत्ता के रूप में भी देखा है। वह रहस्यावादी सत्ता कौन है और क्या है? पंतजी ने इसी रहस्यमयी सत्ता की ओर संकेत करेत हुए 'मौन-निमन्त्रण' नामक कविता में प्रकृति के रहस्यात्मक रूप की अत्यन्त मनोहर झाँकी अंकित की है - देख वसुधा का यौवन भार गुँज उठता। है जब मधुमास विधुर-उर के से मृदु उद्‌गार कुसुम जब खुल उठते सोच्छवास नजाने, सौरभ के मिस कौन - सन्देश मुझे भेजता मौन।

6. प्रतीकात्मक रूप में :- आधुनिक काल में कवियों ने

प्रकृति का सर्वाधिक प्रयोग प्रतीकों के रूप में किया है। प्रकृति के उपकरण विविध भावों, रूपों एवं क्रियाओं के प्रतीक बनकर आधुनिक कविताओं में चित्रित हुए हैं। कवि पन्त ने भी प्रकृति का प्रतीकों के रूप में पर्याप्त प्रयोग किया है -

सुनता हूँ उस निस्ताल जल में रहती मछली मोती वाली।

पर मुझे डूबने का भय है, भाती तटकी चल-डल माली॥

यहाँ 'मोतीवाली मछली' ब्रह्म का प्रतीक है और 'निस्तल-जल' परमार्थ या जीवन की तह का प्रतीक है। इन प्रतीकों द्वारा कवि बतलाना चाहता है कि इस जीवन की तह में जो परमार्त तत्व छिपा है, उसे पकडने

और उस में लीन होने के लिए बहुत से लोग अन्तर्मुख होकर गहरी डुबकियाँ लगाते हैं, पर कवि पंत को तो उसका अव्यक्त रूप ही रूचिकर है।

7. अलंकार योजना के रूप में :-

हमारे प्राचनी आचार्यों द्वारा परिणति प्राय: सभी अलंकारों के रूप में प्रकृति का प्रयोग किया जाता ह। पंत की कविता में मधुबाला कीसी गुंजार, वारि बिम्ब सा विकल हृदय, इन्द्रचापा-सा बचपन, 'विहग' बालिका का सा मृदु स्वर आदि-आदि सुन्दर उपमाओं का चित्रण मिलता है। पंतजी की 'भावी पत्नी' की साज-सज्जा प्रकृति के ही अंगों के द्वारा हुई है -

अरुण आधरों की पल्लव प्रात, मोतियों सा हिलत। हिम-हास। इन धनुषी पट से ढंक गात, बाल-विद्युत का पावस-लास॥

यहाँ 'पल्लव', 'इन्द्र-धनुष', 'बाल-विद्युत', 'पावस' आदि का प्रयोग अत्यन्त सुन्द रूपों में हुआ है।

इसी प्रकार रूपक अलंकार का प्रयोग देकिए -

नवल मेरे जीवन की डाल।
बन गई प्रेमविहग का वास॥

इसी तरह कवि पन्त ने सुन्दर संगारूपक अलंकार की सृष्टि करते हुए प्रकृति के उपकरणों का बडा ही सजीव एवं सुन्दर प्रयोग किया है -

अहे वासुकि सहस्र-फन !
लक्ष अलक्षित चरण तुम्हारे चिह्न निरन्तर,
छोड रहे हैं जग के विक्षत वक्ष-स्थल पर।

इस प्रकार पंतजी ने प्रकृति चित्रण विविध अलंकारों के रूप में किया है

8. मानवीकरण के रूप में :-

प्रकृति का मानवीकरण तो छायावादी कवियों की प्रमुख प्रवृत्तियों में एक हैं। पन्तजी ने भी प्रकृति के विविध उपकरणों पर मानवीय चेष्टाओं और भावनाओं का सुन्दर एवं सजीव आवरण चढ़ाया है। उदाहरण के लिए कवि ने 'छाया', 'बादल' , 'मधुकरी', 'संध्या', 'सन्ध्यातारा', 'नौका-विहार' आदि कविताओं में

प्रकृति को मानवीय भावों भावनाओं, चेष्टाओं, व्यापारों आदि से ओतप्रोत करके पूर्णतया सचेतन प्राणियों के रूप में अंकित किया है।

उदाहरण के लिए सन्ध्या का मनोहर रूप देखिए –

कौन तुम रूपसि कौन? व्योम से उतर रही चुप–चाप छिपी निज छाया छवि में आपु सनहला फैला केश कलाप – मधुर, मंथर, मृदु, मौन!

पंत जी ने गंगा नदी को मानवीय भाव, आकार प्रकार वेषभूषा, साज–सज्जा आदिसे सुसज्जित करके एक तापस–बाला के रूप में अत्यन्त सजीवता तथा सचेन्त के साथ अंकित किया है –

सैकत शय्या पर दुग्ध धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म विरल,
लेटी है, श्रान्त, कलान्त, निश्चल।
तापस बाला गंगा निर्मल, शशि-मुख से दीजिए।
लहरे उर पर कोमल कुन्तल।

9. लोक-शिक्षा के रूप में :-

प्राचीन काल से ही प्राय: कविगण मानवों प्रकृति के द्वारा शिक्षा देने आये हैं। प्रकृति प्रेमी पंतजी ने भी अपनी कविताओं में प्रकृति के विविद परिवर्तनों द्वारा शिक्षा या उपदेश देने का कार्य किया है। 'पतझर' कविता में पुरो पत्तों के निरन्तर झडने तथा नूतन किसलयों के आगमन की बात कह कर, संसार के चिर आवागमन का सुन्दर उपदेश दिया है –

झरो, झरो, झरो !

जंगम जग प्रांगण में, जीवन अंघर्षण में

नव युग परिवर्तन में, मन के पीले पत्ते!

झरो, झरो, झरो!

10. दूती के रूप में :-

विविध कवियों ने प्रकृति को दूत या दूती के रूप में अंकित करके बडी सजीव कल्पनाएं की हैं। पंत भी प्रकृति को दूती के रूप में अपनी विचारधारा से सहमत हैं। अपनी बादल कविता में पंत ने स्पष्ट कर दिया

सुरपात के हम ही है अनुचर, जगत्प्राण के भी सहचर, मेघदूत की सजल कल्पना, चातक के चिर जीवन घर।

बादल दमयन्ती के समान कुमुद कला को सन्देश देने के लिए स्वयं स्वर्ण हंस का-सा रूप धारण करते है और प्रिय का ललाम सन्देश देकर पूर्णतया दूत व्यर्थ करते हुए भी दिखाए गये हैं।

दमयन्ती सी कुमुद-कला के रजत करों में फिर अभिराम, स्वर्ण हँस-से तुम मृदु ध्वनि कर कहते प्रिय सन्देश ललाम।

3. उपसंहार :-

कविवर पन्त प्रकृति के सच्चे उपासक रहे हैं। उनके हृदय में अपनी बाल-सहचरी के साथ सहज मेमत्व रहा है। उन्होंने प्रकृति वन प्रयोग अनेक रूपों और अनेक शैलियों में किया है। उनके काव्य में कहीं प्रकृति काव्य के मूलाधार रूप में विराजमान है, को कहीं वह उनके साधन रूप में प्रयुक्त है। पंत के लिए प्रकृति प्रेयसी है, उनकी प्रेयसी के रूप-वैभव को सजानेवाली है और उस प्रयेसी साज-सज्जा भी वह स्वयं है। प्रकृति पंतजी हास-रुदन की प्रेरक है, उद्दीपक है और उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम है। उन्हें चाहे उपदेश देना हो, या किसी दार्शनिक विचारधारा की पुष्टि करनी हो या किसी अपरिचिता से मौनालाप करना हो, प्रकृति उनकी सर्वत्र सहायिका के रूप में उपस्थित होती है।

प्रकृति ही कवि पंत की वाणी है, भाषा है, अलंकृति है, भावना है और विचारधारा है, उन्होंने विचारों की समस्त विधि, भावनाओं का समस्त आह्लाद, सौन्दर्य का समस्त वैभव और गीतों का समस्त माधुर्य प्रकृति से ही प्राप्त किया है। इसका प्रमाण निम्न लिखित पंक्तियाँ हैं -

सिखा दो ना हे मधुप कुमारि, मुझे भी अपने-अपने मीठे गान।

कुसुम के चुने कटोरों से करा दो ना कुछ-कुछ मधु-पान॥

Lesson Writer

- डॉ.शेख मौला अली

* * * * *

संधिनी

- महादेवी वर्मा

धीरे-धीरे उत्तर क्षितिज से

5. 1

'धीरे-धीरे उतर क्षितिज से' - महादेवी वर्मा की कविता का मूल्यांकन कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

हिन्दी छायावादी काव्य जगत में महादेवी वर्मा का विशिष्ट तथा प्रत्येक स्थान है। सन् 1907 में उत्तरप्रदेश के फरसाबाद में एक सुसंपन्न एवं सांस्कृतिक परिवार में आप का जन्म हुआ। आपकी प्राथमिक शिक्षा इन्दौय में हुई। प्रयाग विश्वविद्यालय से आपने बी.ए और पश्चात एम.ए किया। उसी समय आप प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्राचार्या नियुक्त हुई। फिर उसी संस्था के कुलपति पद पर आभूषित हुई।

2. **साहित्यिक जीवन :-**

बारह साल की अवस्था में ही महादेवी ने काव्य-सृजन प्रारम्भ किया। माँ से सुनी कहानियों के आधार पर बचपन में ही आप गीत रचना करती थीं। विद्यार्थी-जीवन में आपने राष्ट्रीय जागरण के गीत रचे। मानव जीवन की प्रधान घटनाओं के प्रतीक में महादेवी ने 'नीहार' 'रश्मि', 'नीरजा', 'संध्यागीत', 'दीपशिखा' काव्यों की रचना की। 'अतीत के चलचित्र' 'स्मृति की रेखाएँ', 'श्रृंखला की कडियाँ' आदि आप की अन्य प्रमुख कृतियाँ हैं।

महादेवी का काव्य वेदनामय है। लेकिन वह वेदना लौकिक जगत से भिन्न अलौकिक है। इसी कारण आप में अनुभूति की तीव्रता है। 'नीर भरी दु:ख की बदली', 'आधुनिक मीरा' इत्यादि उपाधियों से साहित्य प्रेमी महादेवी का समादर करते हैं। आप कुशल चित्रकारिणी भी हैं।

1934 में 'सेक्सरिया' पुरस्कार और 'मंगलप्रसाद' पुरस्कार, 1956 में 'पद्मभूषण' औक 1982 में ज्ञानपीठ पुरस्कार महादेवी को प्राप्त हुए। इनके अलाता अपने जीवन भर अनेक उपाधियाँ तथा सम्मान प्राप्त किये।

(महादेवी के सम्बन्ध में कहीं भी हो, यही परिचय दें।)

3. धीरे-धीरे उतर क्षितिज से : सारांश

महादेवी वर्मा वसन्त-रजनी का स्वागत करती है। प्रकृति को एक लावण्यमयी मनोहर सुन्दर मानकर महादेवीजी उसके बडे सजीव एवं मार्मिक सौन्दर्य-चित्र अंकित करती हैं। कवयत्री वसंत-रजनी के आह्वान में कहती हैं -

हे वसन्त-रजनी क्षितिज (आकाश)से धीरे-धीरे उत्तर आ। नक्षत्रों का नववेणी बन्धन बन ले, नव शशि (चन्द्रमा) को शीश (सिर) पर फूल जैसा। अलंकृत कर ले और क्रांतिवलय को निर्मल तथा महान अवगुंठन (ముసుగు) बनाकर धीरे-धीरे क्षितीज से उतर कर आ।

हे वसन्त-रजनी तू अपनी चितवन (कटाक्ष) से सुन्दर मोती विछा दे। हे वसन्त-रजनी तू पुलकती हुई आ। पत्तों के मर्मर (पत्तों के एक-दूसरे से लगने से उत्पन्न होनेवाले शब्द) में तेरे नूपरों की सुमधुर ध्वनि है, पुष्पों पर विहरनेवाले भ्रमरों के गुंजार में तेरे कंकण मनोहर तथा बयान्वित ध्वनि सुनाई देती है और तेरा चलन मन्द अलभ तथा लययुक्त होता है। हे रजनी तू अपनी मुस्कान से निर्मल चाँदनी की। धार बदा दे। हे वसन्त-रजनी तू हँसती आ।

हे वसन्त-रजनी स्वप्नों में आनन्द के कारण शोभवली पुलकती है, अंजलि में स्मृतियाँ भर ले, मलयानिल (मताय-गरूत) रूपी। तिशील रेशनी वस्त्र पहन कर, स्पर्स वर्ण की छाया से विश्व में व्याप्त हो, और अभिसार बन हुई आ।

वसन्त में स्वच्छ तथा मधुर सरिता का जलपूर्ण हृदय-सिहर कर उठता है। मधु से भरे हुए पुष्प खिल-खिल कर अपने मनोहर सौन्दर्य तथा सुग्ध से प्रकृति की शोभा बढ़ाते हैं। ये क्षण बार-बार आते रहते हैं।

हे वसन्त-रजनी। प्रिय के आगमन पर चरणों की आदर पर मुग्ध हो यह धरती पुलकित होती है। तू सिहर-सिहर कर आ। तेरा यह आह्वान गीत है और तेरा घन-स्वागत है।

4. समीक्षा :-

महादेवी जी ने इस कविता के शीश-फूल कर, शशि का नूतन रश्मि शब्दों का प्रयोग कलंक रहित चन्द्रमा के उद्देश्य से किया है। वसन्त का आगमन चन्द्रदर्शन के प्रथम चरण में ही होता है। वैसे दर्शित चन्द्रमा स्वच्छ होता है। अशोकवाटिका में शोकमग्न बैठी सीता के वर्णन में वाल्मीकि ने 'चन्द्ररेखा मिवालाम कहा है।'

'सुन प्रिय की पद-चाप हो गयी पुलकित यह अवनी' पंक्ति में 'प्रिय की पद-चाप' - परमात्मा के चरणों

की ध्वनि सुन कर धरती पुलकति होती है। महादेवी जी ऋतु वसंन्त को परमात्मा का प्रतीक मानती हैं। यहाँ कवयत्री गीता की 'मासानां मार्गशीर्षोस्मि ऋतुनां कुसुमा; कर:' भावना व्यक्त करती है जिसका अर्थ है ''महीनों को मार्गशीर्ष और ऋतुओं में वसन्त परमात्मा के रूप हैं।''

इस कविता में प्रकृति की रमणीयता का वर्णन हुआ है। प्रकृति में मानवीकरण रूप का चित्रण हुआ है।

'धीरे-धीरे उत्तर क्षितिज से' छायावादी की उदीयमान कविता है। यह छायावाद की एक गीत रचना है।

Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

5. 2

'विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात, 'कविता में महादेवी जी के भावोद्‌गारों की समीक्षा कीजिए।'

1. प्रस्तावना :-

2. कविता का सारांश :

महादेवी जी अपने सम्पूर्ण जीवन को विरह का कमल (जलजात) मानती हैं। महादेवी जी कहती हैं -

''वेदना में मेरा जन्म हुआ है। मुझे करुणा में निवास मिला है। मेरे आँसुओं को दिन चुनता है और रात उन आँसुओं को गिनती है। मेरा जीवन विरह का कमल हैं।

मेरा हृदय आँसुओं का भण्डार है और मेरे नेत्र भासुओं कि टंकसाल है। मेरा क्षणिक कोमल शरीर बादलो की भांति अश्रुजल के कणों से ही बना है। मेरा जीवन विरह वन कमल है।

मधुमास अश्रु के मधुकण लुटाता आता है। करुण बरसात आँसुओं की ही हाट बन कर आती है। काल ने मुझे हर क्षण अश्रु-धारा ही दी है। आँसुओं की धारा हर पल बह रही है। मेरे निश्वासों के द्वारा पवन मेरी करुणा कथा पूछता है। मेरा जीवन विरह का कमल है।

हे लीलाकमल (भगवान)। मेरे यह जीवन रूपी विरह का कमल तुम्हारा होना चाहता है। आज ही हो सके तो महान भाग्य है। तुम्हारे स्मित मुसकानते रूपी प्राप्त (प्रात:काल) के दर्शन से मेरा विरह रुपी कमल खिल उठे, यही मेरे लिए महान भाग्य की घात है।

मेरा जीवन विरह वन कमल है।''

3. समीक्षा :-

'विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात' गीत रचना में महादेवी जी की 'भावना मूलक रहस्यानुभूति' व्यक्त होती है। कवयत्री उस चेतना सत्ता परमात्मा को अनन्य सौन्दर्यशाली प्रियतम के रूप में मान कर अपने सर्वस्व का परित्यग करती हुई उसके साथ लौकिक रति जैसी अलौकिक दाम्पत्य रति में लीन रहना और उस परमात्मा के साथ एकाकार होना चाहती है। इस में भावुकता प्रणय भावान, प्रेमजन्य आत्मानुभूति और चिरन्तन प्रणय भावना के विरह की व्याकुलता दर्शित होती है।

'विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात।' कहकर महादेवी जीने अपने सम्पूर्ण जीवन को ही विरह का कमल कहा है, जिसका जन्म को ही विरह का कमल कहा है, जिसका जन्म वेदना मुँह में हुआ है, करुणा में जिसकाघर है,जिसके आँसुओं को दिन चुनता रहता है और रात जिसके आँसुओं को गिनती रहती है और नेत्र आँसुओं की टकसाल है और जिसका क्षणिक कोमल शरीर बादलों की भाँति अश्रुजल के कणों से ही बना है आदि-आदि में करुणा की प्रधानता अभिव्यक्त हुई हैं। कवयत्री की आत्माभिव्यंजना व्यक्त हुई है।

यहाँ कवयत्री महादेवी जी सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य तथा सारुप्य दशाओं में विचरती हैं जो योगमार्ग है।

'महादेवी जी की' नीरभरी दुख की बदली की भावना यहाँ साकार दर्शित हुई है।

Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

5. 3

महादेवी वर्मा कृत 'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल' कविता में कवयत्री का हृदयांकन हुआ है, समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

2. कविता का सारांश :-

महादेवी जी अजस्र विरह-व्यथा को अपने हृदय में स्थान दिये हुए हैं। उनकी यह विरह-भावना प्राकृतिक रहलों की तरह अविरत्न प्रवाहमयी हैं, उसमें जल-स्रोत की तरह अखण्ड गति हैं, आकाश की तरह असीम अवकाश है, सिन्धु की तरह अनन्त व्यथा है और पृथ्वी की तरह अक्षुण्ण सहिष्णुता है।

'मधुर-मधुर मेरे दीपक जब' उच्चकोटि की रहस्यावादी गीत रचना है।

कवयत्री का कथन है -

'हे मेरे दीपक मधुर- जब कर मेरा हृदयांकर कर। हर युग में प्रतिदिन, प्रतिक्षण और प्रतिपल जलकर मेरे प्रियतम का पथ आलोकित कर। युग-युग में (जन्म-जन्म) में प्रतिदिन, प्रतिक्षण और प्रतिपल जलकर, मेरे प्रियतम का मार्ग तेजोमय करा। हे दीपक! तू धूप (आरती) बनकर लोक में सुगंध फैल। दे और अपने मृदुल शरीर को मोंम की तरह घुला दे। अनन्त प्रकाश-पुंज को विश्व में व्याप्त कर दे और अपने जीवन का हर अणु गत्वा दे। हे मेरे दीपक! पुलक-पुलक। कर जल!'

नव नूतन कोमल और शीतल जीव तुझ से ज्वालाकण माँग रहे हैं। विश्वरूपी शलभ (पतंग) तुम्हारे अन्वेषण में कहता है। 'बाथ में तुझ में मिल कर भस्म न हो सका। विश्व में सारे जीव तेरे तेज-पुंज में विलीन होकर अपना हृदयार्पण करना चाहते हैं। आकाश में असंख्याक दीपक (नक्षत्र) नित्य जलते रहते हैं और उनमें कोई तेल (स्नेह) नहीं डाला जाता। सागर जलमय होता है, किन्तु उसका हृदय भी सदा जलता रहता है, समुद्र के गर्भ में 'बडवागिन' होती है। बादली पानी बरसता हैं, किन्तु उस में बिजली (अग्नि) होती है। सारे संसार में कोई जीव या वस्तु नहीं जो अन्दर से जलता न हो। सारा विश्व अन्तर्लीन हो कर भभकता रहता है।'

हे मेरे दीपक! विहँस-विहँस कर जला।

वृक्ष के काण्ड, शाखाएँ, उपशाखाएँ, पत्र सब कुछ हरे भरे होते हैं, किन्तु वे भी ज्वाला को हृदयांगन कर

लेते हैं। उनका हृदय भी सतत संतप्त होता रहता है। धरती जड दिखाई देती है। लेकिन उसके गर्भ में तापों (गर्मी) की हलचल होती है। लेकिन ऊपर से यह वसुधा शान्ति दीखती है, किन्तु उसके हृदय में भी अग्नि-भाण्ड है। मेरे द्रुततर जीव निस्वासों से बुझने का डर मत कर। मैं अपनी चंचल मृदु पलकों से लिए अंचल की ओट किये हूँ।

''हे मेरे दीपक! सहज-सहज जल!''

अनंत काल गमन में हमारा बन्धन बिलकुल छोटा है। अब तू समय की परवाह न कर और घडियाँ मत गिना। मैं अपने नेत्रों के अक्षय भंडार से तुझ में आँसू रूपी जल भारती रहुँगी। तुम को मैं अपने आँसूरूपी जल से जीवन प्रदान करूँगी।

असीम अन्धकार में तेरा प्रकाश चिरकाल रहेगा। यहाँ सारे जीव निरन्तर नूतन (नष) खेल खेलते रहेंगे। घन अन्धकार के अणु-अणु में विद्युत की तरह अमिट छाप (चित्र) अंक्ति करता चल तू जितना जल सकता है, उतना जल क्यों कि छलनामय (घोखेबाज) क्षय समीप आनेवाला है। उसके मधुर मिलन में तू मिट जाना और उस अनन्त उज्वल तेजोमण्डल में तू घुल कर खिल जा।

हे मेरे दीपक! मदिर-मदिर जल और जल कर प्रियतमा का पथ आलोक्ति कर।

3. समीक्षा :-

(क) असीम विरह-व्यथा :-

इस कविता में महादेवी जी की विरह व्यथा व्यक्त होती है। उस विरह-व्यथा में भाव-साधना के अश्रुओं का अविरल प्रवाह भरा हुआ है, हृदय-सिन्धु का सतत उद्वेलित ज्वर भरा हुआ है। इसलिए वह विरह-व्यथा असीम है, अविरल हैं, शाश्वत और अनन्त है। कवयत्री और विरह व्यथा दोनों एकाकार होकर उनकी विरहानुभूति में अभिव्यक्त हुई है। इसलिए कवयत्री महादेवी जी अपने जीवन दीपक के सतत प्रज्वलित रहने की कामना व्यक्त करती हैं।

(ख) प्रतीक योजना :-

'दीपक' को जीवन का प्रतीक मानकर बढ़ी है। मनोरम कल्पना की गई है। यह कविता की प्रती कात्मकता है।

(ग) वैज्ञानिक विशेषता :-

'जलमय सागर का उर जलता' और 'विद्युत से घिरता है बादल' में वैज्ञानिक विशेषता प्रकट हुई है। व्यतिरेक अलंकार का प्रयोग हुआ है।

(घ) दार्शनिक परिणति :-

'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल' उच्च कोटि की दार्शनिक गीता-रचना है और रहस्यावाद की ज्वलंत कविता है। यहाँ कवयत्री की स्वानुभूति की संवेदना प्रकट होती है।

जीव के हृदय स्थित ज्योति का संबोधन यहाँ हुआ है - ज्योतिर्ज्वलति ब्रह्माअहमस्मि, यह उपनिषद् वचन है।

मानव के हृदय में 'नील' ज्योति होती है और उसके बीच परमात्मा का स्थान होता है। इस उपनिषद्वचन को हृदयंगम कर कवयत्री महादेवी ने अपनी रहस्यात्मक संवेदना को अक्षर रूप दिया है।

नीलतोयद मध्यस्तात विद्युल्लेखेव भास्करा।

नीवारशूकवत्तन्वी पीताभास्यत्यणूपमा।

तस्या शिखाया मध्यये परमात्मा व्यवस्थितः।

5. 4

'मैं नीरभरी दुःख की बदली' कविता में महादेवी जी की भावनाओं मूल्यांकन कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

2. कविता का सारांश :-

महादेवी जी कृत 'मैं नीर भरी दुःख की बदली, कविता कवयत्री अपने हृदय की असीम व्यथा व्यक्त करती है। महादेवी जी स्वयं को वेदना के जल से भरी हुई एक दुःख की बदली बताती हैं। जिसके स्पन्दन में चिर निस्पन्द, बडा हुआ है। उसके करुण-क्रन्दन में आश्रित विश्व हँस रहा है। उसके नेत्रों में निरन्तर दीपक जलते रहते हैं और उसकी पलकों में सतत निर्झरिणी मचलती रहती है।

मैं नीर भरी दुख की बदली।

स्पन्दन में चिर निस्पन्द बसा,

क्रन्दन में अवहत ''विश्व हँसा,

नयनों में दीपक से जलते, पलकों से निर्झरिणी मचली।''

कवयत्री का स्वयं कथन है – मैं नीर भरी दख की बदली हूँ। मेरे स्पन्दन में चिर निस्पन्द बसा हुआ है। मेरे करुण–क्रन्दन में व्यथित विश्व हँस रहा है। मेरे नेत्रों में निरन्तर दीपक जलते रहते हैं और मेरी पलकों से निर्झरिणी सतत मचलती रहती है।

मेरा पग–पग संगीत से भरा हुआ है और मेरे श्वासों में स्वप्न–पराग झरता है। आकाश में नवरंग वस्त्र जैसा बनते हैं। (ताना–बाना की तरह) छाया में मलय पवन पलता है। क्षितिज–भृकुटि पर घिर कर धूमिल हो, अविरल चिन्ता का भार बनती हूँ। रज–कण पर जल–कण हो मैं बरसती हूँ और नवजीवन का अँकूर बनकर निकला पडती हूँ।

हे प्रियतम! तुम पथ को मलिन करते न आना और लौटजाते समय पद–चिह्न न देते जाना। इस आगम के जग में मेरी सुधि मिली है और सुख की सिहरू खिलने लगती है।

विस्तृत आकाश का कोई भी कोना कभी मेरा अपना न होना। मेरा इतिहास यही और इतना ही है। कल मेरा जन्म हुआ और आज मिट–चली।

3. समीक्षा :-

इस कविता में 'विरह–व्यथा, की अजस्रता व्यक्त होती है। महादेवी जी ने इस प्रगीत मुक्तक के द्वारा जीवन एवं जाग्रत में व्याप्त स्वानुभूत सुख–दु:खों की अत्यधिक रामणीय अभिव्यंजना की है। उन्होंने विश्वव्यापी दु:खों एवं पीडा को अत्यन्त मार्मिकता एवं सजीवता के साथ चित्रित किया है। यह कविता कवयत्री की स्वानुभूति वेदना की उज्वल प्रीतक है।'

छायावादी कविता का यह उज्वल तम उदाहरण है।

- Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

5. 5

'महादेवी का वेदना-भाव' पर लेख लिखिए।

1. प्रस्तावना :-

आधुनिक युगीन हिन्दी–कवयत्री महादेवी के काव्य में वेदना की एक ऐसी धारा सर्वत्र विद्यमान है, जो कि पाठकों और आलोचकों के लिए एक अस्पष्ट, जटिल एवं दुर्बोध विषय बना हुआ है। विभिन्न विद्वानों ने इस पर अपने–अपने विचार व्यक्त किये हैं। स्वयं कवयत्री ने भी इस पर यत्र–तत्र प्रकाश डालने का प्रयास किया है। महादेवी की वेदना एक रहस्यात्मक परदा है, जो उनके जीवन और काव्य की भाव–भूमि पर आधारित है।

2. वेदना का स्वरूप :-

महादेवी ने अपने 'वेदना' भाव का उल्लेख 'वेदना' एवं 'पीडा' आदि शब्दों में किया है। वेदना या पीडा के उल्लेख के साथ मधुर विश्लेषण का प्रयोग भी सर्वत्र हुआ है जैसे – 'मधुमय पीडा', 'वेदना के मधुर क्रय' साधारणत: वेदना या पीडा, मधुमय नहीं होती। किन्तु एक अनुभूति ऐसी भी होती है जहाँ एक और हृदय में अतुलित आह्लाद होता है। वहाँ दूसरी ओर अत्यधिकपीडा भी उस मीठी और तीखी अनुभूति को 'प्रेम' या 'प्रणय' की संज्ञा दी जाती है। प्रणयानुभूति में 'मधुरता' तथा 'वेदना' दोनों का अनभव एक साथ होता है।

मेरी मधुमय पीडा को कोई पर ढूँढ़ न पाये।

पालियों मैं ने कैसे इस वेदना के मधुर क्रम में।

गई वह अधरों की मुस्कान, मुझे मधुमय पीडा में बोर वेदना – मिश्रित बताने का प्रचलन बराबर रहा है। महादेवी की 'मधुर–पीडा' भी प्रेम की ही पर्यायवासी कही जा सकती है। 'मधुमय पीडा' और 'अधरों' की मुस्कान 'साथ–साथ' चलती हैं। अनन्त परमात्मा प्रियतम को सम्बोधित कर महादेवी जी कहती है –

तुम को पीडा में ढूँढा, तुम में ढूँढूँगी पीडा।

महादेवी जी स्पष्ट कहती है कि ''तुम में ढूँढूँगी पीडा'' – यह 'तुम' गौण है और 'पीडा' प्रधान। 'पीडा' का अर्थ प्रेम या प्रणय है। प्रेम से ही कवयत्री को प्रियतम की प्राप्ति हुई है और प्रियतम में भी वह पीडा (प्रेम) ढूँढ़ना चाहती हैं।

3. प्रणय युक्त द्वैत-भावना :-

महादेवी जी सरारीर जीवन में प्रियतम के दर्शन चाहती हैं। वे अपनी द्वैत स्थिति के साथ-साथ प्रेम-रस का भी अस्वादन करना चाहती है। उन्होंने 'वेदना' या 'पीडा' शब्द का प्रयोग 'प्रणय' के अर्थ में ही किया है। उनके प्रणय में विरह का आधिक्य है।

प्रिय ! मैं लेती बाँध मुक्ति

सौ-सौ लघुतम बन्धन अपने में,

तुम्हें बाँध पाती सपने में।

महादेवी जी कई बार अपनी पीडा को सुरक्षित रखने के लिए प्रियतम के मिलन तक ठुकरा देती हैं। वे अद्वैतवाद में विश्वास रखती हुई भी द्वैत स्थिति को ही अधिक चाहती हैं, प्रेम का यह समस्त व्यापार तभी तक चल सकता है, जब तक कि कवयत्री अपनी पृथक सत्ता बनाए रखें। अत: शान्तिपूर्ण निर्वाण या मोक्ष की अपेक्षा यह पुण्य-युक्त द्वैत के अनुभव को अधिक पसन्द करती हैं।

4. वेदना का उन्मेश :-

महादेवी ने अपने जीवन में वेदना का उन्मेश किस प्रकार हुआ-इसका वृत्तान्त उन्होंने बार-बार अपने गीतों में बताया है। कवयत्री मुग्धावस्था में ही किसी की चितवन से आहत हो, सदा के लिए पीडा के पुण्य बन्धन में बांध गई।

इन ललचाई पलकों पर,

पहरा जब या व्रीडा का साम्राज्य मुझे दे डाला,

उस चितवन ने पीडा का।

कुछ स्थानों पर महादेवी जी 'चितवन' के स्थान पर उस अदृश्य की मुस्करहट से वरीभूत होने की बात भी कहती हैं -

बिछानी थी सपनों के जाल

तुम्हारी वह करुणा की ओर,

भई वह अधरों की मुस्कान,

मुझे मधुमय पीडा में बोर।

× × ×

यह घटना बहुत पुरानी है।

तब से न जाने कितने युग बीत गये।

गये तब से कितने युग बीत, हुए कितने दीपक निर्वाण महादेवी जी ने अपनी किशोरावस्था के दिनों ही इस प्रणय वेदना का राग आलापना आरम्भ कर दिया था। अत: इस घटना को बहुत पुरानी बताना समीचीन है।

5. वेदना का आलम्बन :-

महादेवी जी ने अपनी प्रणय–वेदना के आलम्बन का वर्णन सांकेतिक रूप में विविध स्थानों पर किया है। अपनी प्रथम भेंट के सम्बन्ध में वे लिखती हैं –

झंटक जाता था पागल बात,

धूलि में तुहिन कणों का हारा

सिखाने जीवन का संगीत,

तभी तुम आये थे इस पार॥

उनकी संगीतज्ञता का परिचय अन्य गीतों में भी मिलता है –

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से,

स्वप्न लोक – आह्वान।

वे आये चुपचाप सुनाते,

तब मधुमय मुरबी की ताना।

कवयत्री अपने निर्गुण निराकार प्रियतम की अस्पष्ट सी झलक कवयत्री प्रकृति के रूप–वैभव में देखती है –

मेघों में विद्युत सी छवि उनकी बनकर मिट जाती।

आँखों की चित्रपटी में जिस में मैं अंक न पाऊँ॥

कई बार यह निर्गुण ब्रह्म आत्मा के साथ आँख-मिचौनी

खेलता हुआ भी दृष्टिगोचर होता है।

मैं फूलों में रोती, वे बालारुण में मुस्काते।

मैं पथ में बिछ जाती हूँ, वे सौरभ में उड जाते॥

कवयत्री महादेवी वर्मा अपने अलौकिक प्रियतम की प्रतिछवि प्रकृति के सौन्दर्य में देखती हैं। विद्युत में उनकी छवि, राशि किरणों में उनकी आभा, सागर की तरंगों में उनका खासोच्छ्वास और तारकों में उनकी अपलक चितवन का आभास मिलता है।

6. वेदना भाव का उद्दीपन :-

महादेवी जी की अलौकिक प्रेम में प्रकृति के विभिन्न रूपों का प्रभाव स्पष्टतथा दृष्टिगोचर होता है। प्रकृति के क्रिया-कलापों के कवयत्री अपने प्रणय के स्वप्नों का साक्षात्कार करती है। अपनी ही मनस्थिति के अनुकूल कवयत्री प्रकृति के कण-कणा में करुणा, वेदना और आँसुओं का दर्शन करती है।

झूम-झूम कर मतवाली सी पिये वेदनाओं की प्याला,

प्राणों में रुँधी निःश्वासे आती ले मेघों की माला,

उसको रह-रह कर रोने में, मिलकर विद्युत के खोने में।

महादेवी जी के जीवन में आशा और उल्लास का संचार होता है तो उन्हें मेघ मुस्काते हुए, जलधर हँसते हुए और विद्युत प्रणय की सुनहली पाश के सदृश प्रतीत देती है।

मुस्काता संकेत भरा नभ अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं।

विद्युत के चल स्वर्ण-पाश में बँध हँस देता रोता जलधर।

अपने मृदु मानस की ज्वाला गीतों से नहलाता सागर॥

महादेवी ने प्रकृति के उद्दीपन रूप की व्यंजना महादेवी ने सफलता पूर्वक की है।

6. प्रेमिका के अनुभव :-

महादेवी जी ने अपनी वेदनानुभूतियों की अभिव्यंजना अत्यन्त सूक्ष्म में की है, फिर भी उनके काव्य में विभिन्न शारीरिक, मानसिक एवं सात्विक अनुभवों का चित्रण कहीं-कहीं उपलब्ध होता हैं।

अलि कैसे उनको पाऊँ।

वे आँसूँ बनकर मेरे, इस कारण ढुल ढुल जाते।

इन पलकों के बन्धन में मैं बाँध-बाँध पछताऊँ॥

चुपके से मानस में अछिपते उच्छ्वासें बन।

जिस में उनकी साँसों में देखूँ पर रोक न पाऊँ॥

महादेवी जी अपने 'अनुभवो' को व्यक्त नहीं होने देती। फिर भी उनके आँसुओं की चर्चा उनके उनके काव्य में मिलती है -

मुलक -पुलक उर सिहर-सिहर तन, आज नयन आते क्यों भर-भर!

8. संचारी एवं अन्य भाव :-

महादेवी के वेदना-भाव में दो अन्य भाव सदा सहचरी रूप में मिश्रित रहते हैं - (1) जगत के दीन-दुखियों के प्रति करुण भाव और दूसरा निजी वैभव के प्रति निर्वेद का भाव। कवयत्री स्वयं विरहिणी हैं। अत: उनका प्रकृति एवं जगत। के शोकातुर प्राणियों के प्रति संवेदना व्यक्त करना स्वाभाविक ही है। फूलों के जीवन की दु:खमय परिणति देख कर महादेवी का हृदय-वेदना जागृत हो जाती है।

देकर सौरभ दान पावन से कहतेजब मुरझाये फूल,

जिसके पथ में बिझे वही क्यों भरता इन आँखों में घूल?

'अब इन में क्या सार', 'मधुर जब गाती भौरों की गुनार मार्मर का रोदन करता है,' ''कितना निष्दुर है संसार।''

यहाँ कवयत्री की हृदय-वेदना ही 'मर्मर का रोदन' है।

महादेवी को अपनी करुण-वेदना से जितना अनुराग है, उतना ही उसे अपने करुणा-भाव से स्नेह है। वे इस तथ्य को स्पष्ट तथा स्वीकार करती हुई लिखती हैं - ''दु:ख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है, जो सारे संसार को एक सूत्रा बाँध रखने की क्षमता रखता है .... मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है, परन्तु दु:ख सब को बाँटकर विश्व-जीवन में अपने जीवन को, विश्व-वेदना में अपनी वेदना इस प्रकार मिला देना जिस प्रकार जल-बिन्दु समुद्र में मिल जाता है।'करुण' भाव के अतिरिक्त महादेवी के प्रणयात्मान के अनेक अन्य संचारियों और विभिन्न प्रणय :- दशाओं का विकास भी दृगिटगोचर होता है। संचारी भाव - ''

दैन्य उदाहण - **सिन्धु को परिचय दे देव! बिगडते बनते कीथि**

क्षुद्र हैं मेरे बुदबुद प्राण, तुम्हीं में सृष्टि विलास तुम्हीं में नाश॥

इसी प्रकार प्रेम की विभिन्न भाव-दशाओं-मिलनाकांक्षा, प्रतीक्षा, अभिसार, मिलन, विरह आदि का निरूपण भी महादेवी जी के काव्य में हुआ है। प्रेमी को प्राप्त करने की आकंक्षा - ''अति कैसे उनको पाऊँ!'' - में व्यक्त हुई मिलन के मधुर स्वप्नों की कल्पना करती हुई कवयत्री कहती हैं अन्य असीम से हो जायगा, मेरी लघु सीमा का मेल॥ देखोगे तुम देव, अमरता खेलेगी मिटने का खेल॥

मिलन की आशा से कवयत्री के हृदय और मन पुलकित होते हैं -

पुलक-पुलक डर, सिहर-सिहर तन, आज नयन आते क्यों भर-भर ।

जीव सरारीर अलौकिक प्रियतम से मिलना संभव नहीं। आत्मा शरीर से मुक्त हो कर ही परमात्मा का सायुज्य पा सकती है। किन्तु उस स्थिति में दोनों का अद्वैत भाव नष्ट हो जाता है। द्वैत भावना नष्ट होती ही प्रेम का आधार समाप्त हो जाता है। अत: कवयत्री महादेवी प्रेम शून्य मिलन की अपेक्षा प्रेमयुक्त विरह को ही स्वीकार करती हैं -

मिलन मत नाम ले, विरह में मैं चिर हूँ।

9. निष्कर्ष :-

महादेवी के काव्य में रस के सभी प्रमुख तत्त्व विद्यमान हैं। फिर भी उनके पि वेदना-भाव के साथ पाठक का पूर्णतया साधारणीकरण हो नहीं पाता। इसका कारण है, उन्होंने अपने अधिकांश गीत कल्पना और विचार के आधारपर लिखे हैं। इस लिए कवयत्री में अनुभूति नहीं मिलती। उनका आलम्बन अलौकिक होने के कारण पाठक प्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार नहीं कर पाता। कबीर ने अपने अलौकिक प्रेमको दाम्पत्यन जीवन के लौकिक

रूप में प्रस्तुत किया है। अत: पाठक का उन से तादात्म्य हो जाता है। किन्तु महादेवी के काव्य में यह बात नहीं मिलती।

महादेवी की शैली में संकेतात्मकता, व्यंग्यात्मकता एवं अस्पष्टता भी आवश्यकता से अधिक है। उनके गीत पाठक के हृदय को रस-प्लावित कर नहीं पाते। संक्षेप में 'हम कह सकते हैं कि उनके काव्य में थोडी मात्रा में भाव या अनुभूति, उस से अधिक मात्रा में विचार और सब से अधिक मात्रा में कल्पना है।' अत: उनके काव्य में कविता, दर्शन और चित्रकला तीनों एक साथ दर्शित होते हैं।

5. 6

महादेवी वर्मा की कविता में व्यक्त रहस्यावाद का उल्लेख कीजिए।

1. रहस्यावाद की परिभाषा :-

रहस्य का अर्थ है - छिपी हुई बात। अत: जिसका मूलाधार छिपा हुआ है, अज्ञात है, उस के बारे में विचार करना 'रहस्यावाद' है। विश्व का सब से बडा रहस्य वह परम तत्त्व या परमेश्वर है, जिसने इस विश्व का निर्माण किया और इसके पाल-पोषण एवं संहार में प्रवृत्त है। इस परमात्मा को जानने, देखने व प्राप्त करने का प्रयत्न युग-युगों से असंख्य दार्शनिक, साधक, भक्त एवं महात्मा-गण करते आ रहे हैं। फिर भी वह परमात्मा अज्ञेय है, अदृश्य है और अगम्य है। रहस्यावाद का सम्बन्ध विश्व की उस रहस्यमयी शक्ति से है। जब मानव की आत्मा उस शक्ति तक पहुँचने का प्रयास करती हुई विभिन्न पकार की अनुभूतियाँ प्राप्त करती है और उन्हें भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त कर देती है तो एक ऐके भाव-समूह का संचयन हो जाता है, जिसे साहित्यिक शब्दावली में 'रहस्यावाद' कहते हैं। इस 'रहस्यावाद' को स्पष्ट करने के लिए विद्वानों ने विभिन्न परिभाषाओं के प्रकाश की रंगृ-विरंग किरणों विकीर्ण की है। कबीर उस रहस्य शक्ति के बारे में - 'कहि बे कूँ शोभा नहीं, देख्या ही परमाण' कहकर, 'रहस्य-गाथा' को 'अकथ कहानी प्रेम की' बता कर और रहस्यानुभूति को 'गूँगों का गुड' मानकर मौन रह जाते हैं।

जयशंकर प्रसाद ने हे अनन्त रमणीय! कौन तुम? यह मैं कैसे कह सकता। (कामायनी) कहकर उस परमसत्ता का सम्बनोधन किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहस्यावाद के सम्बन्ध में लिखा है - 'चिन्तन के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, भावना के क्षेत्र में वही रहस्यावाद है।'

रहस्यावाद के सम्बन्ध में महादेवी का कथन है - 'जब प्रकृति की अनेक रूपता, परिवर्तनशील विभिन्नता में कवि ने एक ऐसा तारतम्य खोलने का प्रयास किया, जिसका एक छोर किसी असीम चेतन में और दूसरा

उसके असीम हृदय में समाया हुआ था। तब प्रकृति का एक-एक अंश एक अलौकिक व्यक्ति लेकर जाग उग। परंन्तु इस सम्बन्ध में मानव हृदय की सारी प्यास न बुझ सकी, क्योंकि सम्बन्धों में जब तक अनुराग जनित आत्म विसर्जन का भाव नहं घुल जाता तब तक वे सरस नहीं हो पाते और जब तक यह मधुरता सीमातीत नहीं हो जाती तब तक हृदय का अभाव नहीं दूर होता। इसी से इस अनेक रूपता के कारा। पर एक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोपण कर उसेक किनट आत्म निवदेन करदेना। इस काव्य का दूसरा सोपना बना जिसे रहस्यमय रूप के कारण रहस्यावाद का नाम दिया गया।'

वस्तुत: काव्य में आत्मा और परमात्मा में प्रेम की व्यंजना को 'रहस्यावाद' कहते हैं।

2. रहस्यावाद के प्रमुख लक्षण :-

रहस्यावाद के तीन प्रधान लक्षण हैं - (1) अद्वैतवादी विचारधारा की स्वीकृति। रहस्यावादी चाहे किसी श्री कर्म या सम्प्रदाय को माननेवाला क्यों न हो, किन्तु मूलत: उसे यह स्वीकार करना पडता है कि आत्मा और परमात्मा अद्वैत (एक) हैं। (2) परम सत्ता से रागात्मक समन्ध की अनुभूति। रहस्यावादी के लिए आत्मा और परमात्मा की एकता की रागात्मक अनुभूति आवश्यक है। (3) भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति। रहस्यावाद के अन्तर्गत उन्हीं अनुभूतियों का समावेश किया जाता है, जो भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति की जाती है। उदाहरण के लिए ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक महत्मा कबीर अलौकिक प्रेम को रहस्यावाद की वाणी में सुनते हैं -

आँखडियाँ झाँई पडी, पंथ निहारि-निहारि।

जीभडियाँ छाला पड्या, राम पुकारि-पुकारि॥

3. महादेवी की रहस्यानुभूति :-

महादेवी जी की रहस्यानुभूति की सभी विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है और उन्हें उच्च कोटि की रहस्यावादी कवयत्री मानते हैं। उनके रहस्यावादी दृष्टिकोण के चार रूप माने जाते हैं - (क) साधनामूलक रहस्यानुभूति, (ख) भावना-मूलक रहस्यानुभूति (ग) माधुर्यभाव-मूलक रहस्यानुभूति और (घ) मानवता मूलक रहस्यानुभूति।

(क) साधनामूलक रहस्यानुभूति :-

(1) जिज्ञासा, (2) साधना और (3) मिलन का आनन्द साधन मूलक रहस्यानुभूति के तीन अंग स्वीकर

किये गये हैं। साधन के हृदय में अंगोचर परम सत्ता के रहस्य को जानते की इच्छा ही 'जिज्ञासा' है। कवि (साधक) को उस चेतना-सत्ता का कुछ-कुछ आभास होने लगता है और उसे पाने के लिए उसके हृदय में सकल्प जाग्रत हो जाता है। इसी को साधना की स्थिति कहते हैं। साधना पूर्ण होने पर परम-सत्ता का साक्षात्कार हो जाता है। तब साधक या कवि अनिर्वचनीय संयोग का सुख प्राप्त करता है।

महादेवीजी के काव्य में साधनामूलक रहस्यामूर्ति की तीनों स्तर विद्यमान हैं। कवयत्री चन्द्रकिरणों को स्पर्श से कुमुद के पुष्पों को विकसित होते देख कर और वायु के निश्श्वास का स्पर्श पाकर नक्षत्रों को चकित होते देख कर अनजाने चौंकती-सी जाती है और उनके हृदय में भी उस दूर के संगीत की भाँति बुलानेवाली परम-सत्ता को जानने की अभिलाषा उत्पन्न हो जाती है और कवयत्री पुकार उठती है- 'वह कौन है?'

कुमुद-दल से वेदना के दाग को

पोंछती जब आँसुओं से रश्मियाँ,

चौंक उछती अनिल को निःश्वास छू

तारिकाएँ चकित सी अनजान सी।

तब कुला जाता मुझे उस पार जो

दूर के संगीत सा वह कौन है?

यहाँ कवयत्री महादेवी की जिज्ञासा की भावना व्यक्त होती है।

फिर कवयत्री उस परम-सत्ता को प्राप्त करने के लिए रात-दिन दीपक की भाँति दीपक की तरह जलते रहना पसंद करती हैं और अपने शरीर को मोम की तरह ही घुला देने में अपने को कृतकृत्य समझती हैं। वेअपने जीवन के अणु-अणु को गला कर प्रियतम के दर्शन के लिए साधनरात रहती हैं -

मधुर-मधुर मेरे दीपक जल!

युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,

प्रियतम फैला विपुल धूप बन,

मृदुल मोम-सा घुल रे मृदु तन!

हो प्रकाश का सिंधु अपिरिमित,

तेरे जीवन का अणु गल-गल!

कवयत्री की साधना पूर्ण होने पर वह दीपक के समान क्षण–क्षण पर अपने को मिटाती हुई धीरे–धीरे अपने प्रियतम का सामीप्य प्राप्त करती है।

दीप - सी मैं

आ रही अविराम मिट-मिट स्वजन और समीप-सी मैं।

नयन श्रवणमय नयनमय आज हो रहे कैसी उलझ॥

रोम-रोम में श्रोता री सखि एक नया उर का-सास्पन्दन।

साधना की पूर्ति होने पर साधिका–सिद्धि प्राप्त करती है और प्रियतम का साक्षात्कार हो जाता है। प्रियतम का श्रावणमय तथा नयनमय हो जातका है। तब आराधिका के रोम–रोम में अनुपम कम्पन होने लगता है और उसके प्राणों के छाले पुलफों से भर कर फूल बन जाते हैं –

पुलकों से भर फूल बन गये

जितने प्राणों के छाले हैं।

अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं?

(ख) भावना - मूलक रहस्यानुभूति :-

इस के अन्तर्गत भावना, प्रणय – भावना, प्रेम – जनित आत्मानुभूति और चिरन्तन प्रियतम के विरह का व्यधिकता रहता है । इसी कारण यह 'भावना – मूलक रहस्यानुभूति' कहलाता है। महादेवी के काव्य में उस अनन्त चितंन सत्ता के प्रति विरह प्रेमजनित आत्मानुभूति की चरम सीमा पर भी पहुँच गया है। 'विरह का जल जात जीवन, विरह का जलजात' कह कर महादेवी ने अपने संपूर्ण जीवन को ही विरह का कमला कहा है, जिसका जन्म वेदना में हुआ है, करुणा में जिसका घर है, जिस के आँसुओं को दिन चुनता रहता है उसी रात जिस के एक – एक आँसू गिनती रहती है, जिसका हृदय ही – आँसुओं का खजाना है और नेत्र आँसुओं की टकसाल है और जिसका क्षणिक कोमल शरीर बादलों की ''भाँति अश्रुजल के कणों से ही कना है।''

विरह का जलजात जीवन विरह का जलजात।

वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास,

अश्रु चुनता दिवस इसका, अश्रु गिनती रात।

आँसुओं का कोष उर, दृग अश्र की टकसाल,

तरल जलकण से बसे घन - सा क्षणिक मृदु गान।

उनका मन विरह की आग में दीपक की भाँति अविराम गति से जलता रहता है, जब कि यहाँ सूर्य- चन्द्र आदि भी छिप जाते हैं, और तारे भी बुझ जाते हैं।

आलोक यहाँ लुटता है, बुझ जाते हैं तारागण,

अविराम जला करता है पर मेरा दीपक सा मना।

अपनी इस तीव्र विरहानुभूति के कारण वे भी अपने प्रियतम की खोज में लीन रहती हैं, और उनके चरणों की रेखाएँ देख - देख कर उनको लगातार ढूँढ़ती रहती हैं -

उजिचारी अवगुण्ठन में विधु ने रजनी को देखा,

तब से मैं ढूँढ़ रही हूँ उसके चरणों की रेखा।

महादेवी प्रियतम की खोज में अपने आपको मिटा देती है और तब उन्हें दूर के संगीत जैसा। वह प्रियतम अपने ही हृदय जे गूँजता सुनाई पडता है। गूँजता उर में न जाने दूर केसंगीत सा क्या?

ध्यान - पूर्वक देखा जाय तो बात होता है कि महादेव जी की रहस्यानुभूति सूकियों की तरह भावना - मूलक की गहराई तक न पहुँचाई।

(ग) माधुर्य भाव - मूलक रहस्यानुभूति :-

महादेवी ने भी मीराबाई की तरह पार्थिव प्रेम और भौतिक पूजा में अपना विश्वास प्रकट नहीं किया है। पर भी अक्षत, चन्दन, अगर - धूम, आरती, अभिषेक- जल, पुष्य आदि सभी पूजा की सामग्रियाँ उपस्थित कर दी हैं।

हुए शूल अक्षत मुझे धूवि चन्दन।

अगर - धूप - सी साँस सुणि - गंध - सुरक्षित,

बनी स्नेह - लौ, आरती चिर, अकम्पित,

हुआ। नयन का नीर अभिषेक - जलकण।

महादेवी की पूजा – अर्चना सम्बन्धी मधुर भावना 'क्या पूजा क्या अर्चन रे' नामक गीत में व्यक्त हुई है। उन्होंने अपने लघुतम जीवन को ही उस असीम का सुन्दर मन्दिर बना लिया है। उनकी श्वासें निरन्तर उस देवता। का अभिनन्दन करती रहती हैं। आँसू उसके चरणों को कोते रहते है, पुलकित रोम ही अक्षत हैं, मधुर पीडा ही चन्दन है, मन ही स्नेहपूर्ण दीपक है, दृग के तारक नवोत्पल हैं, स्पन्दन ही धूप है, अधर प्रिय का नाम जपते हैं और पलकों का नर्तन सदैव ताल देता रहता है।

क्या पूजा क्या अर्चन रे।

'उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा, मधुतम जीवन रे।'

× × × ×

प्रिय - प्रिय जपते अधर, ताल देता पलकों का नर्तन रे।

महादेवी जी में सच्ची अनुभूति है, किन्तु वह काव्य – कला का ताना – बाना पहन कर आयी है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का कथन है कि मीराबाई अपने प्रियतम की खोज में राजमहल त्यागकर निकल पड़ी थी। और उन्हें गृह – वन पुकारती फिरती थी। महादेवी जी की ध्वनि अधिक धीमी और अधिक साम्य है।

अत: महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति मीरा की भाँति माधुर्य भाव – मूलक कह सकते।

(घ) मानवता मूलक रहस्यानुभूति :-

इस के अन्तर्गत संपूर्ण मानवता की चेतना की अनुभूति आती है कवि सर्वत्र व्याप्त परम सत्ता का अनुभव करता है। जड – चेतन में असीम परनसत्ता का प्रभाव देखता है उसकी अनुभूति सर्वात्मवाद या सर्ववाद पर आधारित होती है। ऐसा रहस्यवादी सम्पूर्ण मानवता का पुजारी बन ज़ाता है और मानवता के सुख – दुख में ममेक हो जाता है। महादेवी जी की रहस्यानुभूति इसी मानवतावादी दृष्टि कोण के अन्तर्गत भी आती है। कवयित्री ने परोक्ष अनुभूति के क्षेत्र में प्रवेश करके मानव के 'चिर – दग्ध – दु:खी' हृदय को पहचाना है। मानवों की शाश्वत वेदना का अनुभव किया है, मानवता की कसक एवं टीस का अनुभव किया है और जगती तल पर व्याप्त मूक – वेदना का साक्षात्कार किया है।

महादेवी जी रहस्यानुभूति में सन्तों तथा भक्तों की – सी साधनात्मक एकांगिता साम्प्रदायिकता एवं एकांकिता का सर्वथा अभाव है। कवयित्री पूर्णतया अद्वैत की पृष्ट भूमि पर स्थित होकर पुकार उठती हैं – 'बीन

भी हूँ मैं' तुम्हारी रागिनी भी हूँ।'' फिर वे लिखती हैं तुम अनन्त जलराशि ऊर्मि में चंचल - सी अवदात'। कवयित्री कभी द्वैत - भावना में कहती - ''मैं फूली में सोती, वे बालारुण में मुस्काते, मैं पथ में बिछजाती हूँ, वे सौरभ में उड जाते। '' कवयित्री की रहस्यानुभूति में मानवता के प्रति तीव्र ललक़ होने के कारण ही वे इस दृश्य जगत की वेदना में आर्थिक तल्लीन दिखाई देती हैं। कवयत्री नीलकमल पर हीरे - सी चमकती और, ती बूँदों को साथ मुरझाई पलकों से झरते हुए आँसुओं की बूँदों को भी देखना चाहती है। सुगन्धित मन्द पवन के साथ दु:ख की घूँट पीती हुई ठण्डी - ठण्डी साँसों को देखना चाहती हैं।

देखूँ खिलती कलियाँ या प्यासे सूखे ऊधरों को दु:ख की घूँट पीती या ठण्डी साँसों को देखूँ।

महादेवी जी वैभव को नहीं, कलिक संसार में व्याप्त क्रंन्दन को देखती हैं -

तुझ में अम्लान हँसी है, उसमें अजसु आँसू-जल,

तेरा वैभव देखूँ या जीवन का क्रन्दर देखूँ।

4. उपसंहार :-

महादेवी जी की रहस्यानुभूति पर मध्यकालीन सन्तों एवं भक्तों की भावनाओं का प्रभाव अश्य है। उन में कबीर की भाँति लौकिक क्रियाओं से सम्पृक्त आत्मा एवं परमात्मा के मानवीय प्रेम - भावना नहीं है, सूफी कवि जायसी की भाँति प्रेमजन्य से आत्मानुभूति तथा प्रिय के चिरन्तन विरह नहीं है और मीराबाई की भाँति माधुर्य- भाव में लीन प्रणय - निवेदन नहीं है। उन्होंने चिर संतप्त जगत के मानवों का करुण - क्रन्दन लिया है और सर्वत्र एक चेतना का अनुभव किया है।

कवयत्री महादेवी जीने मानवता की शोक - संतप्त वेदना के साथ एकाकार होकर अपनी रहस्यानुभूति की अभिव्यंजना की है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला आली

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

हुङ्कार

- रामधारी सिंह 'दिनकर

हाहाकार

6. 1

रामधारी सिंह 'दिनकर' कृत 'हाहाकार' कविता का सारांश लिखिए।

1. प्रस्तावना :-

रामकारी सिंह 'दिनकर' जन – जागरण काव्य – धारा के कवि हैं। उनकी कविता ओजस्विता एवं तेजस्विता से परिपूर्ण है। उनकी कविता ओं में योद्धा का गम्भीर घोष है, अनल (अग्नि) का सा तीव्र ताप है और सूर्य का सांप्रखर तेज है। इस लिए 'दिनकर' 'अनल' के कवि कहलाते हैं। 'हुँकार' उनकी प्रथम रचना है, जिसमें थौवन का हुँकार भरा हुआ है, क्रान्ति की तीव्र भावना भरी हुई है और जिस में क्रान्ति और विद्रोह की आग बरसानेवाली कविताएँ संकलित हैं।

2. सारांश :-

कवि 'दिनकर' अपनी 'हाहाकार' कविता के द्वारा जगती के जानों की आहों को पाठक को दर्शाते हैं। वे कविता को सम्बोधित कर कहते हैं –

''हे कविते ! स्वर्ग की ज्वलित शिखा की तरह तुग उड कर मुझ से लिपट गई थी । मेरे जीवन में तन से मैं व्याकुल और प्यासा हो तीनों लोकों में धूम रहा हूँ। यह जगत परमात्मा का दिया हुआ एक मरुथल है। पथिक (मनुज) एक बूँद पानी के लिए विकल हो रहा है। मनुष्य के हृदय प्यास है तोकण्ठ में ज्वाला है किन्तु मरुभूमि सम्मुख है। सारे विश्व में आग लंगी है। अत: घर–घर से धुआँ आ रहा । धरा (पृथ्वी) क्रान्ति मचा रही हैं विश्व में क्रान्तिरूपी आग लगी है। प्रजा जल के लिए तटप रही और जल का नामलेकर रट रही है। जनता के कण्ठ प्यास से सूख रहे हैं। जगत में पानी के स्थान पर विष प्रबल रहा है। उस विष का पान करने के कारण नीलाकाश सूख गया है। पृथ्वी के ताप के कारण वार्षा के जल करुण ऊपर ही ऊ. पर जल जाते हैं।''

मानवलोक की अश्रु – धारा के कारण समुद्र का जल बन गया है। पहाड का हृदय फट जाने के कारण जल – धारा ने कहा, ''मैं पिपासिता (प्यासी) होकर गिरि को फाड चली हूँ'' जिसे सुन कर में विस्मित रह

गया। यह प्रकृति का वैषम्य है, क्यों कि जगत की प्यास बुझानेवाला जल स्वयं प्यासा हो गया। कुछ कवि नग्न तथा अनाछृत मवि का वर्णन कहते हैं। कविता ऐसे कवियों की झाँकी वनती हैं तुम इस दु:खी विश्व से दूर उन कवियों को आकाश कुसुम के वन में ले चली हो। तुम अलस मेघ की तरह किसी दिव्य नन्दन – कानन में खेल रही हो।

सदा संसार में विलासमय जीवन चल रहा है। पुष्प, भूषण तथा वस्त्रों का आवरण हो रहा है। कहीं भी क्रान्ति, (कुलिश – कुठार) का नाम नहीं है। दिन भर पुष्प – हारों का गुम्फन ही हो रहा है और अन्य कोई काम नहीं। जिसे लेकर तुम कल्पना के शतवल पर बसती हो, वही वन्य है। मिट्टी चरण तल पर उनके स्वप्न तोड न पाती है हे विलासिति, कविते! मेरी भी एक इच्छा है कि सौन्दर्य के सामने सिर झुकाऊँ और वसन्त के आगमन पर उस वसन्त का पवन बन जाऊँ। मालिनी नदी के तट पर छिप कर पहुँच जाऊँ और थौवनवती मुनि – बाला कटि पर घट लिए कैसे चलती है, देखना चाहता हूँ कानन के माधवी – कुंज नें आँककर वहाँ तरुणी – आनन में लालिमा देखना चाहता हूँ।

हे कविते। जनारण्य से दूर जाने पर मैं स्वप्न में भी अपना संसार बसा सकता हूँ। मैं जगत के आर्तनाद को सुन कर भी अपना हृदय फाडने से बच जाऊँगा। सारा दिन सूरज की किरणें लहरों पर झिलमिल कर और विहँसकर मिट जाती है। मैं भी तिज स्वप्नों से हिलमिल कर हर्षोल्लास मनाता, अपने को खो जाना चाहता हूँ। आकाश में (आधार रहित होने के कारण) कुटी न बन पाती। मेरे सारे प्रयत्न विफल हुए। मेरी कल्पनों आधी मिट जाती हैं और मेरी बनी – बनायी कल्पना पूर्णत: उजडी जाती है। मैं रह रह कर पंख हीन पक्षी की तरह भू की हलचल में गिर पडता हूँ। स्वप्न – राज्य आँसू के जल में एक झटका (झाडी) मुझे बहा ले जाती है।

कविते। दैव के कुपित होने पर – शाप देने पर बह शाप विद्युत की तरह सिर पर छा जाता है। तब आन्ध – भावनाएँ चली जाती हैं और हृदय विद्रोह कर चीख उठता है। अस्ताचल में पहुँचे सूरज का रक्त तुल्य मुख मण्डल देख कर मेरे नेत्रों से आँसू बरस पडते हैं। मरण की विषय रागिनी आज विकट हिंसा – उत्सव में झंकृत हो रही है। मनुज के दबे हुए अभिशाप पुन: पुन: संसार में उदित होने लगे हैं। Entinational संकृति का निर्मल पट (Eurtain) निठुर करवालों के रवत से रंगेजा रहा है निज सिंहद्वार पर दलित तथा दीन जनता की अस्थि – मशालें जल रही हैं। भूतल में दानवी सभ्ययता 'शान्ति – शान्ति' करती घूम रही है। आज की सभ्यता विष – दन्तों में गरल (विष) भरा हुआ है।

दानवी सभ्यता चर्म में सुई चुभाती है तो हम तनिक भी न हिले? गरदन पर भी हम शान्त रहें और जीभ न खेलें? हाथ की रोटियाँ कुत्तों से छीनी जाने पर भी भूखे ही रहें, कुछ न बोले। जब कोई आचें। तब हम अपने निवास उनको सौंपकर चपके चले जायें, यही शान्ति है? हे दलित प्रबुद्ध कुमारी राक्षसों के रक्त चूसने पर हम शांत रहें? पाप बरा पतिकार शांति कैसे हो सकती है? क्रान्ति मचेगी।

धूप हो या ठण्ड, बिना आराम हमारे कृष्क बाग करते रहते हैं। सारा जीवन उनका बैलों का साथ ही है। उनके मुख में जीभ है और भुजाओं में काम करने की शक्ति है। किन्तु उनके जीवन में सुख का नाम नहीं है। शरीर को ढ़कने के लिए उनके पास कोई वसन (वस्त्र) नहीं है। दोनों वक्त खाने के लिए उन को सूखी रोटी भी मिलती नहीं। उनके लिए वैभव स्वप्न से भी दूर है। पृथ्वी पर उनका दुखमय जीवन है। खलिहानों में उनका हाहाकार मचता रहता है। किसान बैलों के बन्धु हैं। वर्ष भर वे क्या खाते हैं और कैसे जीते है कौन जाने और कैसे जानें? उनकी वाणी बन्द होकर कुछ बोल न पाते और वे आँसू पीकर जीते हैं।

फिर बच्चों का हाल देखो आँसू पीना वे जानते नहीं, उन्होंने सीखा नहीं। हीरे (जगीने) जैसा शिशु माँ का सूखा स्तन चूस -चूस कर और रो-रो कर सो जाता है। विवश होकर माँ देखती है। शिशु की जान माँके ऊँचल से उड जाती है। यदि उसका हृदय फटता, तो माँ रुण बच्चे को शक्त पिला देती है। कब्र में अबोर बालकों की भूखी हड्डियाँ रोती हैं 'दूध' के लिए। रात भर दूध की पुकार उन तडपती हड्डियों से निकलती रहती है। 'दूध' के लिए तडपने की वह पुकार मन्दिरों में पोषण के रूप में अर्चित होनेवाले भगवान तक नहीं पहुँच पाती । हे नक्षत्र मंडल, तुम ढूँढ़ कर बोलो कि इन बच्चों के भगवान कहाँ हैं? सारी दुनिया सोती है। किसी को 'दूध' की वह पुकार सुनाई नहीं देती। फिर, इन बच्चों के लिए दूध कहाँ से ले आऊँ? हे गगन में रहने वाले भगवान आकाश से दूध की कुछ बूँदें दपका दो।

कवि दिनकर यहाँ गंगानदी आकिला सम्बोधन कर कहते हैं ''हे गंगा ! तू अपने पानी को दूध बना द, दूध के लिए तडपनेवाले ये भूखे मुर्दे हैं। इनको कुछ दूध पिला कर मना दे।''

कवि पुन: अपने विचार प्रस्तुत करते हैं, ''अरे, 'दूध - दूध कर पुकार रहे हो। क्या दूध की याद न भूल सकोगे? मर कर भी क्या तुम बिना दूध पिये सो न सकोगे? लोग यहाँ अपने कुत्तों को दूध से नहलाते हैं और दीन तथा दीन बच्चे मर कर भी कब्रों से दूध के लिए तडपते रहते हैं''? हे हिमालय ! बच्चे भगवान के प्रति रूप हैं और वे बेकसूर हैं। उनका शाप विश्व पर पडा हुआ है और वह शाप सारे विश्व को एक दिन हिला देगा।

कब्र के लिए दूध लाना ही पडेगा । जहाँ दूध के घडे मिल पायेंगे उस मंजिल पर जाना ही होगा। सारे मानवों की माता धरती, तुम्हारी जय हो। हे विशाल आकाश, तुम्हारी जय हो। गिरिराज, हिमालय की जाय हो। विन्ध्याचल की जय हो। महासागर की जय हो।

अरे आकाश में विचरनेवाले मेघ, तुम हट जाओ। हम स्वर्ग लूटने के लिए आते हैं। अरे वत्स! तुम रोओ मत ! तुम्हारे लिए दूध खोजने हम जा रहे हैं। ''

3. समीक्षा :-

स्वतन्त्रता प्राति के उपशन्त देश की स्थिति पर कवि 'दिनकर' ने सर्वविध दृष्टि पात किया है और जन – जीवन में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विषमताओं का चित्रण किया है और वर्तमान स्वन्त्रत नागरिक की उस परमुखापेक्षी मनोवृत्ति को फटवारा है। उनकी कविताओं में तेजस्विता की आग भरी हुई है, ओजस्विता का आलोक भरा हुआ है और कर्मण्यता का तूफान भरा हुआ है । उनका अधिकांश काव्य बलिदान और वीरता का अमर राग है, अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध क्रान्ति एवं विद्रोह उत्पन्न करनेवाला सिंहनाद है, अकर्मण्यता एवं आलस्य को नष्ट – भ्रष्ट करने वाला तेज, है, जन – जीवन में प्रभात के कान्ति – पुंज प्रसारित करने वाले दिनमणि (सूरज) की दीप्ति है।

''दिनकर'' के काव्य में महर्षि दयानन्द की – सी निर्भीकता, नवीन की – सी तेजस्विता, भगतसिंह का – सा वलिदान, महात्मा गाँधी की – सी कर्मठता और कबीर की – सी विचारों की स्वच्छन्दता के साथ – साथ सुधारवाद से परिपूर्ण है। इसी कारण वे अपने समय के सूर्य – 'दिन कर' कहलाते हैं।

प्रस्तावना एवं समीक्षा ('दिनकार' की) हर कविता के लिए ये ही लिखें।

पाठ : दिगम्बरि

6. 2

'दिगम्बरि' कविता का सारांश लिखिए।

1. प्रस्तावना :-

2. सारांश :-

कवि दिनकर भावानी का. सम्बोधन कर कहते हैं, हें दिगम्बरि बोला है। आकाश में प्रकाश – पुंज व्याप्त होने लगा। अंधकार ले सिर पर प्रकाश के बाणवले नये अभियान के लिए तेरा फुफकार कब सुन पायेंगे? तेरा हुंकार व्योम के कब विदारित करेगा? दिशाओं के बन्धनों को तोड कर हृदय में बत्ती लगी हुई, है और जल भी रही है। हवा की साँस पर बेताब – सी (बेचैनी) कुछ चल रही है। भूमि पर क्रान्ति मचकर पाताल से आग उभर आयेगी। धरती के भाल पर सूरज के सप्ताश्व बोलते हैं और पृथ्वी के चारों और उमडने वाला समुद्रा भी बोलता है। हे नये युग की भवानी दे दिगम्बरि, दुर्गा! आकाश में तार बोलता है।

हाथ में कफस जेल की थकी बेडी सौ बार बोलती है बोल हृदय पर झनझनाकर टूटनेवाली तलवार बोजाती है। जब–जब मृत्यु ने परीक्षा में हृदय को टटोला, वर्तमान की तरुण टोलियाँ (दल) ललकार कर बोलीं। प्राचीनताओं और नवीनता में वज्र का–सा संघर्ष मच रहा है और धरती नये आदर्श पर चलनेवाली है। नवगगम रोर के कारण बुझी हुई चिता जागी और नयी श्रृंगी उठा कर वृद्ध भारतदेश बोला बन्दी–भवन के प्राचीर में दशरे (फटना) हुई। हिमालय की दरी (गुफा) के सिंह ने भीमाकार से गर्जन किया।

धूल उड कर छाती जा रही है। झंझा (तूफान) कही, से आ रही है और दामिनी कडकती है। मेरी उमडती आह घटा की तरह दीखती है। विश्व का पथ रोकना मेरी इच्छा रही। निर्भय क्रान्ति (प्रभंजन) मची और चिनगारियाँ सज गयीं। क्रयामत की घडी आयी और प्रलय का समय आया। दिशाएँ गूज उठी है और आकाश में उल्लास विखरता आया है। नये युगदेव का नूतन सेज कटक लो। वह पास आया हुआ है। युगों के द्रोही रण मैं कवच पहन कर मौन रहने हैं। अनागत धर्म का हुँकार ध्वजा पर चढ़ कर बोलता है। हे नये युग की भवनाी प्रलय की वेला आ गयी है।

हृदय का श्क्त हमने वेदिका पर बहाया हैं। विश्व का अभिशाप आनन्द के साथ हम ने सिर पर लिया। हम परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं और अब कौन – सा उपहार लायेंगे? हमें दुनिया की कीमतें कैसे चुकायेगं? युग युगों से हम अनय का भार ढ़ोते आ रहे हैं और हम रोज मिटते जा रहे हैं। किन्तु तू चुप रहती हो, कुछ बोलती नही॥ इस दुनिया के राक्षसों पिलाने के लिए हम श्क्त कहाँ से ले आयेंगे? क्या हम प्रतिशोध न कर सकते? यदि तू अनुज्ञा देगी, तो हम सारी धरती को फूँक सकते हैं और रास्ते पर पहाड भी आ जाये, तो उनको दो टूक कर सकते हैं। बूढा विधाता अगर कुछ पूछने आयोग तो हम कह देंगे कि हमने तुम्हारी सृष्टि को मिटाया। अगर पाप को छिपा कर विधाता टूटी हुई धरती को कहीं विधाता जोड देगा, उस सृष्टि को पुनः हम फोड देंगे। हमारे नेत्रों का रक्त हजारे हृदय की वेदना बना सकता है। मृत्यु की घूँघट में हमारा प्यार बोलता है। हे नये युग की भवानी पुलय का समय और चुका है। आकाश में आलोक फैल चुका है।

पाठ : अनल किरीट

6. 3

प्र. 'अनल किरीट' कविता में प्रस्तुत रामधारी सिंह 'दिनकर' की भावनाएँ क्या हैं ? समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

किसी भी महान कार्य की साधना में संघर्ष होता है। मार्ग पर अनेक रोडे होते हैं। उन सबका अधिगमन करने पर ही कार्य – कुशलता तथा सफलता प्राप्त होती है। इसीलिए प्रगतिवादी कवि रामकारी सिंह दिनकर कहते हैं, ''कर्तव्य मार्ग पर चलनेवालों को भाल पर अनल – लिरीट रख बेना होगा। अमृत – बीज पीने के पहले (स्थापित करने के पहले कालकूट (विष) पी लेना चाहिए॥'' कोई भी काम आसानी से नहीं होता, कठिनाइयों का अधिगमन करने पर ही सफलता प्राप्त होती है।

2. सारांश :-

हाथ में तलवार लेकर जो लोग जंग में विजित होते हैं। वे ही अटल शिखरों पर अपना झण्डा उडाते हैं। समय कम होता है। आगे बढ़ो। कठिनाइयों की परवाह न करो। कठिनाइयाँ होती ही हैं और वह प्रकृति का नियम भी है। इस लिए झुककर और रुककर तलवो से काँट मत खींचते रहो । जवानी में चोटें लगती ही हैं। इसलिए फूँक – फूँक कर न चलो और झुककर बचने का प्रयत्न मत करो। कर्मरत होकर कर्तव्य के मार्ग पर अग्रसर होने वाले कभी सोते नहीं और उनकी आँखों में नींद नहीं लगती। कर्तव्य – मार्ग पर आगे बढ़ने पर अनेक विधों का सामना करने पडता हैं। पैरों में छाले आने पर उनकी इच्छा और गति और भी बढ़ जायेंगी। सोनेवाले हार चुके हैं। और जागरूक रहनेवालों की जय निश्चित हैं। आलस्य से कोई काम नहीं बनता । कर्मण्यता की सफलता सदा होती है॥ ओ आशिक (इच्छुक) होनेवाले। भाल पर अग्नि (आग) किरीट रखलो।

जिनको देख कर बडे दिलेर मरदानों (वीरों) की हिम्मत डोल गयी थी उन मौजों पर कुछ दीवानों को किश्ती international चल रही हैं। तूफान भी एक तराना (गीत) है। अत: बेफिक्र हो, काम सम्हाल लो। इस जमाने में लोग अचरज से दाँतों तले उँगली रख कर खडे रहे हैं। कर्मठ निर्भय बैठ कर ज्वाल मुखियों पर अपना प्रभाव जमाते हैं। वे पानी में भी आग लगा सकनेवाले जादूगर हैं। हे जादू – रोनेवाले इन की रूह जरा पहचान रखे।

किसी भी अटल काम के लिए भाल पर अनल फिरीट रखलेना ही पडता है।

नेजों (भालों) पर चढ़ कर रस से भरी जवानी खेल ही यहाँ कहानी घर – घर चलती है। तीनों लोक चाकित होकर सुनते रहते हैं। धरती को सम्हाल कर सजग स्वर्ग बनाना है। क्या यह हो सकता है। आज नव मानव अलहड (Children) बन कर मिट्टी का पुत्तला मात्र रहा है। फिर वह आभिमानी भी है। इस में कोई आश्चर्य नहीं कि: देवपुरी की ईंटे खींचकर उस नगर को ध्वंस करें और जन्नत को लूट कर हीन – दीनों की सहायता करें। तुम्हारी आशा पर दीनजनता लगी हुई है।

जगत सम्हल जाये ? उभरने वाले पानी से खिलवाड नहीं करें। हिमालय से भिडना कितना कठिन है ? हे देशवासियों वीरों के श्कत पीने का फल बहुत बुरा निकलता है। एक दिन तुम को भी पसीने का मूल्य गिन – गिन कर चुकाना होगा। किसने क्या किस्मत पायी है, सब का न्याय कल (निकट भविष्य में) होगा। अभी – अभी संसार जागृत हो अँगडाई ले रहा है।

हे दु:ख का बोझ ढ़ोने वाले मित्र, सम्बल करो। कर्मरत होनेवाले को भाल पर अनल किरीट ढ़ोना ही पडता हैं।

* * * * *

रामधारी सिंह 'दिनकर'

6. 4

प्र. पठित कविताओं के आधार पर 'दिनकर' के क्रान्तिकारी विचारों पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. बेबसी – भैरव हुंकार
3. सामाजिक समानता
4. उत्बोधन
5. खण्डहर की ललकार

6. राष्ट्रीय जागरण

7. उपसंहार

1. प्रस्तावना :-

प्रगतिवादी विचारधारा के कवि रामधारी सिंह दिनकर जीवन का दर्शन बता रहे हैं।

उन्होंने अपने काव्य में समाज और व्यक्ति की अर्थात समिष्टि और व्यष्टि की पीडा और करुणा की वाणी दी है। उन्होंने समाज में व्याप्त शोषण असमानता और अत्याचारों का विरोध किया है।

कवि दिनकर जी ने सामाजिक एवं पूँजीवादी व्यवस्था पर कटु विवेचन किया है। समाज में शोषक और शोषित के मध्य गहरी खाई है। निर्धन की संतान क्षुधा से विह्वल होकर चटपटाती है और दूध की एक-एक बूँद के लिए तरसती है, इसके विपरीत इस सामाजिक व्यवस्था में धनिकों के कुत्ते दूध में स्नान करते रहते हैं। दूसरी ओर धनिकों के यहाँ तेल - फुलेल पर ही रुपया पानी की तरह वहाया जाता है।

2. बेबसी - भैरव हुंकार :-

दिनकर बेबसी हृदय को देखकर पसीज जाते हैं। समाज में दीन, हीन और दलित लोग इतने पडे हुए हैं आज तक धरती पर उनके लिए कोई जीवन निर्वाह का मार्ग दखिाई नी हीं देता। कोयलें भी मानव हृदय की पीडा व्यक्त करती हैं। प्रकृति भी मानव के दुराचारों से दबा रही है। इसलिए कवि वीणा की मधुरिमा के तार तोडकर शंखनाद करते हैं और भैरव हुंकार करते हैं। क्रान्ति के मार्ग पर कवि अपना बलिदान देने केलिए भी तैयार हो जाता है। वे स्वर्ग की पूजा नहीं करते या स्वर्ग में जाना नहीं चाहते। वे स्वर्ग का दहन करना चाहते हैं जो विलासिता का प्रतीक है। क्रान्ति के द्वारा कवि दिनकर जड पदार्थ को भी चेतनायुक्त कर उडने की शक्ति प्रदान करते हैं। चेतनाप्रद मन को वे नेत्र प्रदान करते हैं।

जड को उडने की पंख दिये देता हूँ,

चेतन के मन को आँख दिये देता हूँ।

फिर कवि कहते हैं-

मेरे गान में जागरण है,

मेरे दान में अक्षय आलोक है।

वे क्रान्ति के स्वर में कहते हैं

मैं स्वर को कराल हुंकार बना देता हूँ।

3. सामाजिक समानता :-

दिनकर सामाजिक समानता चाहते हैं। चाहे अमृत हो या विष। वे सभी रस निचोड-निचोडकर लेते हैं। समाज में व्याप्त दीन जनों के हा – हा कारों से उनका मन उद्वेलित हो जाता है। सारे विश्व में अग्नि की ज्वालाएं भभकती दिखाई देती हैं। आक्रन्दन तथा क्रान्ति की भावना भभकती है।

सुना विश्व में आग लगी है,
कण्ठ- कण्ठ में प्यास जगी है।

मानव के अश्रुओं से समुद्र का जल खारा बना हुआ है। सामाजिक समानता केलिए कवि हा- हा कार करते हैं और हुंकार करते हैं। भारत माता नये युग की भवानी के रूप में आती है।

जो सुख चाहता है उसे पहले दु:खों को भोगना है। दु:खों के बाद की प्राप्ति करना जीवन विधान है। इसलिए कवि कहते हैं – अमृत के बीज बोने के पहले काल कूट (विष)को चखना है। सिर पर ताज रखना चाहे तो पहले अग्नि मुकुट रखना चाहिए। दिनकर भिखारियों की सहायता केलिए वे भीख माँगना चाहते हैं।

4. उत्बोधन :-

दिनकर जी फूलों के पूर्व जन्म का गान गाते हैं। फूलों को आदमी अनेक के शृंगारों में उपयोग करके फेंक देता है। राजा गुलाब में कवि देश भक्तों के रक्त की लाली को देखते हैं। वसंत के अगमन पर फूलों की सुन्दरी अपने प्रियतम (कन्त) केलिए ढूँढ़ती रहती है। कवि कलम का वीर है। जो देश केलिए अपना सर्वस्व त्याग करते हैं कवि की कलम बोलती है। वीर केलिए सारा संसार सहारा बनकर खडा रहता है।

वीर तुम्हारे लिए सहारा

टिका हुआ है भूतल सारा।

सामाज बीर की चरण धूलि को सिर पर धारण करता है। उनको सिर नवाकर जय बोलता है। बीर जवान का समाज शत – नमन करता है।

5. खण्डहर की ललकार :-

दिनकर जी कहते हैं कि राजनीतिक दासता, सामाजिक शोषण, उत्पीडन, रोदन आदि भारत में व्याप्त

हुए हैं। कवि की यहाँ मार्मिक अनुभूति यथार्थ का रूप धारण कर सामाजिक उत्पीडन का नग्न चित्र प्रस्तुत करती है। आज दिल्ली पुराने खण्डहरों पर खडी हुई है। कवि दिल्ली की दीवारों में दीन कृषकों की आहें, मजदूरों के आर्तनाद, गरीबों का खून आदि देखते हैं।

अरी ।गरीबों के लोहू पर
खडी हुई तेरी दीवारें।
****
अनाचार, अपमान, व्यग्य की
चुभती हुई कहानी दिल्ली।

दिल्ली पर अनेक प्रेम कथाएँ लगी हुई हैं। वीरता की घटनाएँ दिखाई देती बाबर, औरंगजेब, सलीम, नूरजहाँ आदि। यमुना के पानी में अनेक घूँघटे डूब गयी थी। समाधियों या कबरों पर जुहू की कलियाँ खिलती हैं। फिर देश भक्तों के रकत की लाली गुलाब में छा जाती हैं।

6. राष्ट्रीय जागरण :-

क्रान्तिकारी कवि दिनकर राष्ट्रीय जन जगरण का मंत्र पढ़ते हैं। वे हिमालय को प्रतीक बनाकर राष्टीय जन जागरण का निनाद उठाते हैं। बुद्धदेव से लेकर युधिष्टिर, मिथिला, राणाप्रताप (हल्दी घाटी), सारी नदियाँ आदि सब को समेटकर कवि राष्ट्रीय भावधारा में बढ़ने केलिए कहते हैं।

मेरे भारत के दिव्य भाल।
मेरे नग पति मेरे विशाल
****
कैसी अखणड यह चिर समाधि?
यतिवर ।कैसा यह अमर ध्यान।

देश केलिए कवि दिनकर क्रान्ति मचाना चाहते हैं – 'मैं मनुष्य हूँ दहन धर्म है मेरा ।' देश के बँटबारे पर उनका या कवि का हृदय बेबसी में रोता है। चारों ओर जालिम हृदय का खून पी रहे थे। हिन्दू और मुसलमान दोनों खून के प्यासे थे।

खून की प्यास तो जाकर पियो
जालिमों अपने हृदय का खून।

7. उपसंहार :-

महान कवि रामधारी सिंह दिनकर जी की क्रान्तिकारी भावना विविध कविताओं में हुँकरित हुई। हुंकार दिनकर जी का उदयकालीन कविताओं का विस्फोट है। इस में वीर, श्रृंगार, रौद्र तथा करुण रसों का समन्वय हुआ है। उनकी क्रान्तिकारी भावना में कभी देश की आत्मा प्रज्ज वलित होती है। ये इतने क्रान्तिकारी कवि हैं कि गंगा की धारा में भी दहकती अग्नि को प्रज्वलित करते हैं। दलितों का आर्तनाद दिनकर की कविता में प्रतिध्वनित होता है। कहीं – कहीं छायावाद का लाक्षणिक चित्रण भी प्रस्तुत हुआ है। हुंकार की भाषा प्रैढ हो कर लाक्षणिक विधान में ढलती है।

* * * * *

Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

पाठ : नदी के द्वीप

- अज्ञेय

7. 1

'नदी के द्वीप' कविता में पल्लवित अज्ञेय की प्रयोगवादी विचारधारा स्पष्ट कीजिए।

(अथवा)

'नदी के द्वीप' कविता का सारांश लिखिए।

(अथवा)

'नदी के द्वीप' कविता में व्यक्त प्रयोगवादी भावना की चर्चा कीजिए।

1. प्रस्तावना : -

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन प्रयोगवाद के प्रवर्तक तथा पोषक हैं। 'अज्ञेय' के नाम से वे विख्यात हैं। कवि तथा उपन्यासकार के रूप में हिन्दी साहित्य क्षेत्र को उनकी अनुपम देन है, वे लौलिक एवं क्रान्तिकारी कलाकार हैं। कहानियाँ, यात्रा साहित्य और आलोचना क्षेत्रों में उन का महान स्था है।

स्वतन्त्रता संग्राम में क्रान्तिकारी आन्दलोन के सिलसिले में चार वर्ष वे जेल गये और दो वर्ष नजरबन्द रहे। उन्होंने किसान, आन्दोलन में भागलिया ।

अज्ञेय के जीवन का उनके साहित्य से विशेष सम्बन्ध है। वे मुख्यत: अन्तर्मुखी कलाकार हैं।

2. प्रयोगवादी प्रतीक :-

नदी के द्वीप प्रयोगवादी कविता है। अज्ञेय अपने साहित्य में प्रतीकों की नयी भावनाएँ प्रस्तुत करते हैं। संस्कृत, हिन्दी, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के विद्वान होने के कारण वे प्रतीकों को नये भावों से समन्वित कर के प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण प्रयोगवादी कविता नई कविता के रूप में भी विख्यात है।

3. प्रयोगवादी प्रतीक योजना :-

अज्ञेय समाज को नदी के रूप में और द्वीप को व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं या यों कहिए, नदी समाज का प्रतीक है और द्वीप मानव का। नदी और द्वीप $\rightarrow$ समाज और व्यक्ति हैं।

4. कविता का सारांश :-

कविता आत्म- कथात्मक शैली में चलती है। नदी के द्वीप कहते हैं -

(क) नदी हमारी माँ है :-

हमारा जन्म नदी में हुआ है। नदी हमारी जननी है। नदी के प्रवाह में हमारा जन्म हुआ है। हम यह नहीं कहते कि नदी हमको छोडकर बढ़ चले। नदी हमें जन्म देकर एक आकार (स्वरूप) देती है। हमारे कोण, सलियाँ, अन्तरीप अभार, रेत की ढ़ेरें आदि सभी नदी की देन हैं। हमारे विविध रूप और गोलाइयाँ (Round Shape) उसी की बनी हुई हैं।

नदी हमारी माँ है, उसी से हम बने हुए हैं।

(ख) अस्तित्व :-

हमारा अपना अस्तित्व हैं, हम द्वीप हैं। हम नदी की धारा में नहीं बह चलेंगे। हम स्त्रोतस्विनी नदी की संतान है, किन्तु हम नदी की धारा में नहीं बह चलेंगे। हम स्थिर रूप से रहेंगे। नदी के साथ अगर हम बह जायेंगे तो हमारा स्वरूप नहीं रहेगा। हमारा आकार नदी की धारा में चल कर हम रेत हो जायेंगे। हम वह जायेंगे तो रहेंगे ही नहीं। हमारे पैर उखड जायेंगे। प्लावन होगा और हम ढ़ह जायेंगे और बह जायेंगे। हमारा अस्तित्व ही नहीं रहेगा, अस्तित्व-साहित्य को सहना होगा। यहाँ प्रश्न है कि हम धुल कर नदी में बह जायेंगे तो क्या नदी की धारा बन सकते है ? कदापि नहीं। हम नदी में घुल कर गल कर रेत बनेंगे और नदी की धार को कलुषित करेंगे जिस से उस जल को कोई जीव-जन्तु पी न पायेगा।

(उ) नियति :-

हम द्वीप हैं। द्वीप होना कोई शाप नहीं। यह हमारी नियति एवं प्राकृतिक लक्षण है। हम हैं नदी के पुत्र और नदी की गोद में बैठे हुए हैं। नदी हमारी माँ विशाल भूखण्ड से हम को मिलाती है: और वह भूखण्ड हमारे पिता हैं।

(घ) संस्कारयुक्त चिरजीवन :-

नदी तुम कहती और बढती चलो। भूखण्ड से हम को दाय (पौतृक संपत्ति) प्राप्त हुआ है और प्राप्त हो रहा है। उसे माँजती और संस्कार देती चलो। हमारी इच्छा है - आह्लाद के कारण या किसी के स्वैराचार

से या आत्याचार से तुम बढ़ोगी और तब तुम्हारा प्लावन घरघराता उठेगा। नदी कर्मनाशा और कीर्तिनाशा के रूप में तुम्हारी मान्यता है। तुम काल-प्रवाहिनी बन प्लावन-प्रलय रूप धारण करो। हमें यह सब स्वीकार है। तुम्हारे काल-प्रवाह में हम भी बहकर रेत बन जायेंगे और जल-प्लावन में छन कर (being filtered) फिर कही जमकर अपना अस्तित्व बनायेंगे। हम पुन: कहीं पैर टेक कर अपना स्वरूप तथा अस्तित्व जमायेंगे। तब वहाँ-कहीं हमारे नये अस्तित्व तथा व्यक्तित्व का आकार खडा होगा। हम पुन: द्वीप ही बने रहेंगे।

हे माता, तब भी तुम हम को संस्कार प्रदान करो। तुम्हारे संस्कार हमें सदा चाहिए और तुम्हारे बिना द्वीप नहीं, तुम्हारे बिना हम (द्वीप) शुष्क तथा नीरस बन जायेंगे। अत: सदा तुम हमें अपने संस्कारों से पल्लवित तथा जागृत करती रहो। हमारा अस्तित्व बनाये रखो और हमें सतत जीवित रखो।

प्रयोगवादी प्रतीक योजना :-

(क) नदी हमारी माँ है :-

समाज से व्यक्ति का जन्म होता व्यक्ति का जन्मा समाज से होता है। समाज मानव का स्रोत है। सामाजिक चेतना में व्यक्ति का जन्म होता है। मानव का व्यक्तित्व समाज से निर्मित होता है। मानव के व्यक्तित्व के विविध रूप, मार्ग, उभार (उन्नति), कहकर नये व्यक्तित्व और उसके विविध रूप (Shapes) समाज से ही बनते हैं।

समाज व्यक्ति को जन्म देता है और व्यक्तित्व का निर्माण समाज से ही होता है।

(ख) अस्तित्व :-

मानव का अपना अस्तित्व है, वही व्यक्तित्व है, व्यक्ति सामाजिक प्रथा में वह नहीं चलना चाहता। व्यक्ति का निर्माण समाज से होता हैं, व्यक्ति सामाजिक धारणा में बह नहीं चलता। वह स्थिर रहकर अपना व्यक्तित्व जमाना चाहता। अगर व्यक्ति सामाजिक प्रथा के साथ बह चलेगा, तो उसका स्वरूप तथा व्यक्तित्व नहीं रहेगा। मानव सामाजिक धारा में अपना अस्तित्व खो बैठेगा। सामाजिक धारा में बहजाने से व्यक्ति का अपनत्व या निजीपन रहेगा। नहीं उसके पैर उकड जायेंगे। सामाजिक क्रान्ति (प्लावन) में वह ढ़ह जायेगा और अस्तित्वहीन होगा। अस्तित्व राहित्व को सहना होगा। व्यक्ति सामाजिक धारा में वह जायेगा, तो समाज में बहने से उसका स्वरूप, उसका पद और उसका व्यक्तित्व अस्तित्वहीन हो जायेंगे। अस्तित्वहीन व्यक्ति का समाज में कोई स्थान नहीं रहेगा। उस से सामाजिक मूल्यों में प्रदूषण बी छा जायेगा और उस से किसी का उपयोग भी न होगा।

(ग) नियति :-

व्यक्ति का निजीपन होता है, व्यक्ति होना कोई शाप नहीं। यह व्यक्ति की नियति है। गर्व प्राकृतिक लक्षण है। व्यक्ति समाज का पुत्र है और वह समाज की गोद में बैठा होता है। समाज व्यक्ति का विश्व-समाज के संपर्क कराता है। विश्व-समाज व्यक्ति का पिता है।

(च) संस्कारयुक्त चिरजीवन :-

समाज सदा गतिशील है और गतिशील ही रहेगा। समाज व्यक्ति का मेल विश्व-समाज से कराकर व्यक्ति का संस्कार कराता चलता है। किसी के अत्याचार या प्रचोदन से सामाजिक प्रगति नहीं होती बल्कि क्रान्ति मचेगी। समाज कर्मबन्धन और कीर्तिबन्धन तोड डालता है। कालगति में प्लावन-क्रान्ति का धारण करें। व्यक्ति को यह सब स्वीकार है। समाज के काल प्रवाह में व्यक्ति भी उस में अणुरूप (लघुरूप) में लीन होना। सामाजिक क्रान्ति-प्लावन में छनकर व्यक्ति पुन: नयी उमंगों से चमकेगा और अपना अस्तित्व जमायेगा। व्यक्ति चैतन्यप्रद होता है। वह कही पुन: पैर टेक कर अपना स्वरूप तथा अस्तित्व जमायेगा। तब वहाँ - कहीं उसके नये अस्तित्व तथा व्यक्तित्व पर ही कडा होगा। व्यक्ति सदा अपने व्यक्तित्व पर ही खडा होगा।

व्यक्ति की इच्छा है कि समाज उसे संस्कार प्रदान करें। सामाजिक चेतना तथा सामाजिक संस्कार, व्यक्ति के लिए अनिवार्य हैं। समाज के बिना कोई व्यक्ति नहीं। सामाजिक चेतना के बिना व्यक्ति शुष्क तथा नीरस बन जायेगा। अत: व्यक्ति को समाज अपने संस्कारों से पल्लवित तता जागृत करे। समाज सदा व्यक्ति का अस्तित्व बनाये रखे और व्यक्ति को सतत् जीवित तथा चेतनाप्रद रखे।

5. उपसंहार :-

मानव समुदाय से ही व्यक्ति का निर्माण होता है। व्यक्ति और समाज परस्पर रखते है और अन्योन्याश्रित है। व्यक्ति समाज नहीं। समाज व्यक्ति को बनाता है। इस प्रकार अज्ञेय व्यक्तित्व की मान्यता रखते हैं।

Lesson Writer

- डॉ. शेख मौला अली

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

पाठ : असाध्यवीणा

- अज्ञेय

7. 2

'अज्ञेय' कृत 'असाध्यवीणा' कविता का मूल्यांकन कीजिए।

राजाने प्रियंवद का स्वागत किया। राजसभा में राजा ने आत्मीय भावना के साथ ''हे प्रियंवद! केशकम्बली! गुफातगेह! आप के आगमन से मेरा जीवन धन्य हुआ। मेरा विश्वास है कि मेरे जीवन की लालसा आज ही पूरी होगी।'' कहा। राजा ने लघु संकेत पर सेवक दौडकर असाध्य वीणा लाये और राजा के सम्मुक रखा। सभा की आँखें वीणा को देख कर प्रियचंद के चेहरे पर टिक गयीं।

राजा ने बताया, ''यह वीणा उत्तराखण्ड को गिरि-प्रान्तर से आयी थी। वहाँ घने वनों में महर्षिगण तपस्या में लीन रहते हैं। बहुत समय के पहले आने के कारण उस का पूरा इतिहास हम जान न सके। किन्तु हमने सुना है अति प्रचीन किरीटी तरु से वज्रकीर्ति ने मन्त्रपूत कर के इस वीणा को गढ़ा था। उस वृक्ष की महानता ऐसी अनोखी है कि उस के कानों में हिम-शिकर अपने रहस्य कहा करते थे, उसके कन्धों पर बादल सोते थे, हाथी की सूण्डों जैसी डालियाँ हिम-वर्षा (बर्फ गिरते समय) से वन-यूथों की रक्षा खाल से कन्धे खुजलाते आते ते। हमने सुना है कि उस वृक्ष की जड पाताल लोक में पहुँची थी और उसकी गन्ध की प्रवर्णशीलता से वासुकि नाग सोता था।''

उसी किरीटि-तरु से वज्रकीर्ति ने सारा जीवन रसवीणा को गढ़ा। वह बडा सादक या और हठयोग करता था। उसके योगसाधना से समन्वित यह वीणा पूरी हुई और साथ ही वज्रकीर्ति की जीवन-लीला समाप्त हो गयी।

राजा कुछ रुके, लम्बी साँस लेकर बोलने लगे, इस वीणा के वादन के लिए अनेक प्रसिद्ध कलावन्त बुलाये गये। किन्तु, उन सब की विद्या और दर्प चूर हो। गयें। कोई महान वादक भी इस वीणा को झंकृत न कर पाया। यह असाध्य वीणा वैसे ही रह गयी। अब भी मेरा विश्वास है कि वज्रकीर्ति की महान तपस्या व्यर्थ नहीं जायेती। सच्चा-स्वरसिद्ध इसे गोद में लेने पर यह वीणा अवश्य बोलेगी। इस लिए हे तात! प्रियंवद! वज्रकीर्ति की यह वीणा लेलो! मैं, यह मेरी रानी और यह भारी जन-सभा उत्सुकता से प्रतीक्षमण हो कर देक रही हैं।

केशकम्बली ने गेह-गुफा ने कम्बल खोलकर धरती पर बिछाया और वीणा उस पर रख कर, पलक मूँदकर प्रापा खींच कर प्रणाम किया। वीणा के तार स्पर्श कर वह धीरे बोला।, ''हे राजन। मैं तो कलावन्त नहीं हूँ, मैं एक शिष्य तथा साधक मात्र हूँ और जीवन के अनकहे सत्य का साक्षी हूँ। वज्रकीर्ति, प्रचीन किरीटी-तरु और यह अभिमन्त्रित वीणा-इनके ध्यान मात्र से व्यक्ति गद्‌गद विह्‌वल हो जाता है।''

इतना कहकर प्रयंवद चुप हो गया। सभा भी मौन हो रही थी।

प्रियंवद ने वीणा उठाकर अपनी गोद में रख ली और उस पर धीरे-धीरे झुक कर तारों पर मस्तक देक दिया। सभा चकित हो गयी। प्रेक्षक कहने लगे - ''अरे, प्रियंवद सोता है क्या? वह हार कर वीणा पर झुक गया क्या ? क्या यह वीणा सचमुच असाध्य है?''

वह स्पन्दित सन्नटा था। प्रियंवद मौन उस वीणा को साथ रहा था। वह अपने को उसी किरीटी-तरु को सौंप रहा था। क्या प्रियंवद उसे वीणा को बजा सकेगा। वह वीणावज्रकीर्ति के जीवन-भर की साधना रही है। केशकम्बली राजसभा को भूल गया था। वह मन्त्रमुग्ध हो कर अकेलेपन में डूब गया था। किरीटी-तरु साक्षी के रूप में खडा रहा। किरीटी-तरु की जड वासुकि के फण पर आधारित थी और उस वृक्ष की शाखाओं पर बादल आराम करते थे और उसके कान में हिमगिरि अपने रहस्य बताते थे। प्रियंपद ने उस तरु को सम्बोधित कर कहा था, ''ओ विशाल तरु! शत-सहस्र वसन्तों के फल स्वरूप तुम्हारा इतना विशाल तथा महान रूप बना है, कितने हैं। बरसातों के कितने है। खद्योतो ने तुम्हारी गती उतारी है; दिन में भ्रमर तुम पर गुंजार करते है; रातों में झिल्लियाँ अनथक मंगल गान सुनती रहती हैं, संध्या है; समय खडा-कुल की आनन्द हेला चलती रहैती है, और डाली-डाली के कम्पन होती है। हे झारखण्ड के विशाल अग्रज किरीटी-तरु! तात् सखा, गुरु, आश्रय, त्राता, महच्छाय सब कुछ तुम हो। वन-ध्वनियों को बृन्दगान के तुम मूर्त रूप हो। क्या मैं तुम को सुन सकते हूँ। देख सकता हूँ और अनिमष, स्तब्द, संयत, संयुत, निबधि तुम्हारा ध्यान कर सकता हूँ। तुम को छूने का साहस कैसे, बाँध कर रखी गयी । इस वीणा को बनाने में संचित संगीत रचने में, तारों को छीनने में कितनी चोटें लगी होगी। तुम्हारे प्राण कितना विलखें होंगे? ''

यह वीणा मेरी गोद में रखी हुई है और रहने दो। किन्तु मैं तुम्हारी गोद में बैठा हुआ हूँ। तरु-तात में मोद भरा लाडला बालक हूँ। मुझे संभालो। मेरी हर किलकार पुलक में डूब जाय। मैं तुम्हारे अन्तः स्वर का एक-एक स्वर सुज कर उस का अनुभव गुनना चाहता हूँ। मैं तुम्हारे डोलन की लोरी पर नन्मयता के साथ झूमना चाहता हूँ। तुम गाओ। तुम्हारी लय पर मेरी साँसे पल्लवित हों।

यह वीणा तुम्हारा अंग-प्रत्यंग से बनो हुई है। आत्मसात तथा रस-भरित तुम गाओ। तुम गा कर मेरे अंधियारे अन्तस में स्मृतियों (शास्त्रों) का और श्रृतियों (वेदों) का आलोक जगा दो।

हाँ! हाँ!! मुझे स्मरण है - बादलों के गरजकर पत्तियों पर वर्षा बूँदे पट-पट बरसाना। घनी रातों में मधूकवृक्ष का टपकना। उन आवाजो से खग-शावकों (पक्षियों के बच्चे) का डरना। शिलाओं से टकरा कर लहरो! से उभर कर कल-कलनाद करते बहनेवाल जलप्रवाह का सौन्दर्य। कुहरों से छन कर पर्वतीय ग्रामों में ओस के कणों में धुल कर ढ़ोलक-उत्सव में भाग लेना। गडरिये की मुग्धकारी बाँसुरी, कठ फोडे का ठेका, फुलसुँधनी की मुँह से सुरकना, कोमल, तरल और मनोहर ओस बूँदों का ढ़लना आदि-आदि मुझे सब कुछ स्मरण है।

शरद की शोभा मनोहर होती है। हरिसिंगार के फूल खिला ते हैं तालाब भरकर झरने सर-सर ध्वनि के साथ पल्लवित होने लगते हैं। क्रौंच,टिट्टभ पानी के किनारे रहनेताला एक पक्षी हंस-बलाक आदि की चह-चह मेरी यादों में हैं। चीड वनों में सुगन्ध से उन्मत्त होकर जहाँ की वहाँ टकपानेवाले पतंग, जल-प्रपात की ध्वनि, झिल्ली-दादुर, कोकिल-चातक आदि के झंकार और प्रकृति में मन्द पवन की साँय-साँय ध्वनि आदि सब कुछ मुझे याद हैं।

काले पहाडों-से मेघों का उमडना, हाथियों के चिंधड जैसा मेघों का गरजना, बाढ़ का घरघराहट उभरना, रेतीले कगार का छप-छाप गिरना, ओलों के गिरने से चोट लगना, सूखी घासों का टूट जाना गिरने स्निग्ध घास में एंकी मिट्टी का धीरे-धीरे धुल जाना, धरती के घावों को हिम तुषार का चुपचाप सहलाना आदि सब कुछ मुझे स्मरण है। चट्टानों के गिरने से धरती काँपती है और दिशाएं गूँज उठती है। फिर धीरे-धीरे निश्शब्द छा लेता है।

हरी तलहटी में, छोटे पेडों की ओर में वन-पशुओं की आतुर तृप्त पुकारें-गर्जन, घुर्घर, चीख, भूँक, हुक्का, चिचियाहट आदि सुनाई देती हैं। कमल और कुमद पत्रों पर जल पक्षी के पैरों की छाग दिखाई देती है। दादुर की चकित छलांगों की याप, थात्री के घोडों की टाप और भैसों के भारी खुरों की स्थिरथाप आदि-आदि मेरे स्मरण में हैं।

भोर की प्रथम किरण ओस-बूँद को ताकने पर सहसा चौकी-सी सिहरन होती है। दोपहर को घास-फूल सहसा खिल जाते हैं तो असंख्य मौमाखियाँ गुंजार करती झूमती हैं। उस समय एक प्रकार में तारों की तरल कंप-कंपी दर्शित होती है, मानो आकाश में तरल-नयन ठिठकती हैं। तब अनेक युवतियों की माताओं के आशीर्वाद तारों के रूप में पुलकित होते हैं। यह सब मुझे स्मरण है।

मुझे एक प्रत्येक चित्र स्तब्ध और विजडित करता है। मुरली मधुर बाद जैसा स्वर सुनाई देव है। वायु-सा नाद-भरा मैं उड जाता हूँ। मैं अपने को स्वयं भूल गया हूँ। मुझ से परे और शब्द में तपमान मधुर स्वर सुनता हूँ। यह सब मुझे स्मरण हैं।

हे नादमय प्रकृति ! ओ तरु! ओ वन! ओ मनोहर नाद-संभार ! रस प्लावन (माधुरी) मैं कुछ नहीं ।

हथौडे के समान चोटें और किसी को लंगर पर नौका पर अविराम कसमसा थपकने बाली लहरें लग रही थी। किसी को छोटे पत्थर पर चमरौधे की रूँधी चाप लग रही थी। किसी को प्रवाह से कटी मेड से बहते जल की छुल-छुल आवाज लग रही थी। नाट्यकार की एडी के घुँघरूँ की झङ्कार किसी को लगरही थी। किसी को युद्ध का ढोल (युद्ध-भेरी) और किसी को सन्ध्या-गोधूली में सुनाई देनेवाली टुन-टुन आवाज फिर किसी को प्रलय का डमरू-नाद, किसी को जीवन की पहली अंगडाई और किसी को भयंकर काल रूप लग रही थी। सारे लोग वीणा की स्वर माधुरी में डूब गये थे, उसमें विचरे थे, तन्द्रा में डूबे और फिर जग पडे, धीरे-धीरे सब पुन: स्वाधीन में आने लगे। सब होश में आ गये।

राजा ने सिंहासन से उतर कर साधुवाद (साधु! साधु!) किया। रानी ने अपनी सतलडों वाली माला अर्पित की। विह्वलता के साथ ''हे स्वरजित! धन्य धन्य! '' कहा।

संगीतकार ने वीणा को धीरे से नीचे रखा और जिस प्रकार शिशु को माँ पालने में सम्हल कर सुलाती है, उसी प्रकार पुचकार कर और दुलार के साथ उठ खडा। आवर्जन करते हुए राजा ने कहा, ''मेरा यहाँ कोई श्रेय नहीं और मैं शून्य में डूब गया था। वीणा के माध्यम से मैं ने अपना सर्वस्व सब को सौंप दिया था। अब मैं जान गया जो कुछ है वह प्रजा को देना है, मेरा कुछ नहीं। असल में वह वीणा का भी न था। जो कुछ भी मेरे पास था वह महाशून्य, महामौन, अविभाज्य, अनन्त, अप्रमेय परमतत्त्व का था। वह निश्शब्द संगीत या जो सब में अन्त:-स्वर के रूप में चलता रहता है।''

प्रियम्वद केशकम्बली नमस्कार करके मुड गया। वह अपनी कम्बल लेकर गेह-गुफा को चला गया। सभा उठ चली। सब लोग अपने-अपने कामों में रत होने लगे। युग पलट गया।

यहाँ कवि अज्ञेय कहते हैं - ''प्रिय पाठक! यों मेरी वाणी भी मौन हुई।''

समीक्षा :-

उत्तराखण्ड हिमालय हैं जो तपोभूमि हैं। प्राचीन किरीटी-तरु भारत की संस्कृति का प्रतिक है। वज्रकीर्ति एक साधक है। वीणा सांस्कृतिक परंपरा है। प्रियंवद उस परंपरा के आधुनिक काल का साधक है। साधना से सांस्कृतिक वीणा पुनः झंकृत होती है। वीणा की तान में सारा संसार लयान्वित होता है। तब प्रजा और राजा में कोई अन्तर न रह कर सर्व समानता होती है। ऊँच-नीच तथा धनी-निर्धन का भेदभाव मिट जाता हैं।

कवि अज्ञेय यहाँ प्रकृति में मानवीय भावनाओं का समावेश करते हैं। जैन तथा बौद्धधर्मों के अहिंसातत्व का भी इस कविता में समावेश हुआ है।

असाध्य वीणा साध्य हुई है।

यह कविता एक शब्द शिल्प है।

7. 3

'अज्ञेय' के 'काव्य-सौष्ठव' पर विचार कीजिए।

(अथवा)

'प्रयोगवाद' के प्रवर्तक के रूप में 'अज्ञेय' का स्थान निर्धारित कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

सन 1940-41 के आस-पास भारतीय जन-जीवन में दमन,गतिरोध, महंगाई, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय संघर्ष आदि के कारण ऐसी उथल-पुथल मचा दी गयी थी। उठे कि भारत का मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी इनसे विक्षुब्ध हो उन के हृदयों में असंतोष की तीव्र ज्वला धधकने लगी। अधिक संवेदनीशीलता तथा आन्दोलनों की असफलताओं के फलस्वरूप 'प्रयोगवाद' का श्रीगणेश हुआ। हिन्दी साहित्यक्षेत्र में 'तार-सप्तक' का प्रकाशन हुआ। इसके प्रधान सम्पादक 'अज्ञेय' थे। गजानन माधव, मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा आदि प्रयोगवाद के अन्य कवि हैं। 1951 ई.में. अज्ञेय के सम्पादकत्व में 'दूसरा-तारसप्तक' प्रकाशित हुआ।

प्रयोगवादी नव्यकाव्य-धारा में 'प्रयोग' ही एकमात्र साध्य माना गया है। प्राचीन परम्पराओं को तथा प्राचीन उपलब्धियों को निष्क्रिय तथा निरर्थक बताया गया हैं। कविता को जन-जीनव से उत्पन्न माना गया है। शब्दकोश को भी बदल दिया गया है। साधारणीकरण के स्थान पर विशिष्टीकरण की स्थापना हुई है। शब्दों को तोड-मरोड कर अधूरे वाक्यों से अपनी-अपनी उलझी हुई संवेदनाओं को व्यक्त करके नीच-से-नीच वस्तु को भी कविता-वस्तु के रूप में लिया गया है। नये-नेय प्रतीक तथा बिम्ब-योजनाओं का आविष्कार हुआ है। इस प्रकार सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय' प्रयोगवाद के प्रवर्तक माने जाते हैं। वे बहुमुखी प्रतिभावान है। कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, निबन्धकार, सम्पादक आदि के रूप में 'अज्ञेय' की प्रतिभा फैली हुई है।

प्रयोगवाद 'नई कविता' के नाम से भी पुकारा जाता है। जिस में अनुभूतिगत तथा अभिव्यक्तिगत विशेषताएँ होती हैं। प्रयोगवाद पर पाश्चात्य प्रभाव भी है। अज्ञेय पर प्रधानतया टी.एस.इलियट का प्रभाव है।

2. प्रणयानुभूति :-

प्रयोगवाद के प्रवर्तक 'अज्ञेय' की काव्य-प्रणाली प्रणय की टीस, चुभन, कसक, वेदना, छटपटाहट आदि से हुआ है। कवि प्रणय के साधनात्मक रूप से बढ़ कर वासनात्मक रूप को ही अधिक महत्व देते हैं। प्रणय को वे न दैवी संपत्ति मानते हैं और न आसुरी। केवल मानवी रूप में वे प्रेम या प्रणय का अवलोकन करते हैं। प्रणय का जीवन्त रूप विरह की पीडा में विद्यमान रहता है -

विरह की पीडा न हो तो प्रेम क्या जीता रहेगा?

प्रणय के कारण संयोग के क्षणों में प्रियतमा का शरीर कनक चम्पे की तरह स्मरण करते ही सुगन्ध फैला देती है -

तुम्हारी देह

तुम्हारी कनक - चम्पे की कली है

दूर ही से

स्मरण में भी गन्ध देती है।

2. व्यक्ति वाद (व्यक्ति-निष्ठा) :-

अज्ञेय जी व्यक्ति-निष्ठ कवि हैं। वे सामाजिक द्रष्टा के रूप में हमारे सामने आते हैं। वे कभी प्रकृति

रमणीयता में शान्ति का अनुभव करते है। सामाजिक समस्याओं के प्रति वे अपना सन्देश देते हैं –

में कवि हूँ।	मैं ने देखा।
	एक बूँद सहसा
द्रष्टा, उन्मेष्टा	उछली सागर के झाग से –
संधाता	रंगी गयी क्षण भर
अर्थवाद	ढ़लते सूरज की आग से।
मैं कृतव्यय।	

संध्या समय कवि अज्ञेय शून्य आकाश के नीचे डोलनेवाली अकेली बाजरे (ఒజ్జ) की कलगी देख कर कहते हैं कि इस सृष्टि का खुला वीराना घना हो उसके पास सिमट आता है और वह एकांकित समर्पित होता है –

यह खुला वीराना संसृति का घना ही सिमट आता है – और मैं एकान्त होता हूँ समर्पित।

कवि अपनी व्यक्ति निष्ठा के कारण रात के समय छिटकती चाँदनी में अपने अन्तःस्पन्दन को क्षणभर जीवन्त रहने के आग्रह करता है –

पीलो

बस्सी

शरद चाँदनी

मेरा

अन्तः स्पन्दन

तुम भी क्षण–क्षण जी लो।

4. समय की महत्ता :-

समय का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। गीता के अनुसार 'कालः कलयतामस्मि', मैं (भगवना) ही

काल हूँ, फल गया है। काल में हर क्षण का महदेव होता है।

क्षण अमोघ है,

इतना मैं ने पहले भी पहचाना है।

कवि क्षण की सम्पूर्ण अनुभूति का आस्वादन करना चाहता है। उस क्षण के आलोक में विचरना चहता है।

सत्य का सुरभित स्पर्श हमें मिलजाय

क्षण भर।

5. जिजीविषा की इच्छा :-

वर्तमान का मानव विविध समस्याओं के आवर्तन में फँसा हुआ है। अगणित समस्याओं के कारण उसका जीवन दुर्भर हो रहा है। अनके जटिल समस्याओं के घेरे में फँस जाने के कारण जीवन की अस्थिरता आ गयी है। कवि अज्ञेय मानव की जिजीविषा चाहते हैं। वे स्वयं जीवन चाहते हैं। जिजीविषा की धारण को अभिव्यक्त करने के लिए अज्ञेय जी ने 'मछली' को प्रतीक बजा कर 'सोन मछली', मछलियाँ 'जीवन छाया' आदि कविताओं की रचना की।

1. घना दे, चितरे,

   मेरे लिए एक चित्र बना दे।

2. हम निहारते रूप काँच के पीछे हाँप रही है मछली।

   रूप तृषा भी (और काँच के पीछे) है जिजीविषा।

   सागर आँक कर फिर आँक एक उछली हुई मछली।

6. आर्थिक विडम्बना :-

सम्य मानवों का समूह समाज कहलता है। महाभारत में कहा गया है, ''अर्थस्थ पुरुषो दास:।'' (मानव अर्थ (घन) का दास है, किसी भी समाज का मूलाधार अर्थ (धन) है। भूखे को शान्त करना कठिन है। भूख व्यक्ति को भ्रष्टाचार एवं अनाचार के लिए प्रेरित करती है। मानव का मानसिक सन्तुलन कुण्ठित हो जाता है।

आर्थिक विडम्बना मानव को संत्रस्त करती है। आर्थिक विडम्बना के कारण मानव के हृदय में प्रतियोगिता तथा संघर्ष भावना जाग्रत हुई है। असहाय तथा दुर्बल व्यक्तियों का हृदय संत्रस्त होता है और धातु की तरह समाज की भट्टी में गला दिया जाता है। फलत: धनी तथा पूँजी पतियों के प्रति उनके हृदय में तीव्र घृणा उत्पन्न होती है –

तुम, जो रक्त चूस ठठरी को देते हो जलदान,

सुनो तुम्हें ललकार रहा हूँ, सुनो घृणा का गाल।

7. क्रान्तिकारी भावना :-

प्रयोगवाद का प्रधान लक्ष्य आर्थिक असमानता तथा विडम्बना के प्रति विद्रोह करना है। अत: आर्थिक विषमता के प्रति कवि आक्रोश, शोभ एवं घृणा व्यक्त करते हैं। उस विडम्बना को जड से मिटाने के लिए अज्ञेय जी क्रान्ति मचाकर सामाजिक समानता की स्थापना करना चाहते हैं। कारीगर, मजदूर, श्रमजीवि आदि लोग रात–दिन पसीना बहाने पर भी उनके पेट, पीठ से चिपके रहते हैं। वे लहू का घूँट पीकर रह जाते हैं। पूँजीपति उनका रक्त श्रम के रूप में चूसते हैं। इस लिए कवि क्रान्ति मचा कर चाहे रक्त भी प्रवाहित करना चाहते हैं –

मश्शाल जला हूँ -

ना सही क्षयग्रस्त नगर में -

इन वन-खण्डी में आग लगा हूँ।

8. नवीन सौन्दर्य-स्रष्टा :-

'अज्ञेय' नवीनता के पुजारी हैं। समाज में व्याप्त कुण्ठा, निराशा, बेबसी, घुटन, विडम्बना आदि पर उन्होंने नवीन सौन्दर्य–बोध की अभिव्यक्ति की है। प्राचीन रचना–विधान, प्राचीन शैली, परम्परागत काव्य प्रणाली आदि से विमुख हो अज्ञेय नीवन उपमाएँ तथा नवीन प्रतीकों से अपनी प्रियतमा के रूप सौंदर्य की झाँकी अंकित करते हैं। वे अपनी प्रियतमा के नेत्रों का सजीव चित्र अंकित करते हैं –

तुम्हारे नैन

पहले भोर की, दो ओस-बूँदें हैं

अछूती, ज्योतिमय

भीतर द्रवित।

9. आध्यात्मिक दृष्टि :-

वैसे तो प्रयोगवाद नये-नये प्रयोग को लेकर चलता है। अज्ञेय परमात्मा को मानते है और परमात्मा के साथ अपना सम्बन्ध जोडना चाहते हैं। उनके अनुसार परमात्मा तेजोमय, एकाकी, गतिमय, शान्तिप्रद आदि है। वे परमात्मा की कल्पना महाशून्य के रूप करते हैं। उनके अनुसार परमात्मा महाशून्य-महामौन, अविभाज्य, अनाप्त, अद्रवित, अप्रमेय तथा शब्दहीन है। अज्ञेय व्यक्तिवाद से आगेबढ़ कर समाजवाद की ओर दृष्टि रखते हैं। वे समाज और ईश्वर का एकाकार मानते हैं। वे अपनी आत्मा रूपी ज्योति को भगवान के प्रति अर्पित फरते हैं। वे कहीं-कहीं बुद्ध का करुणवाद की प्रस्तुति करते हैं -

मेरे छोटे कुटीर का दिया।

तुम्हारे मन्दिर के विस्तृत आँगन में

सहमा - सा रख दिया गया।

10. प्रकृति-दर्शन :-

'अज्ञेय' प्रकृति के अन्तर्गत चेतना के आभास का दर्शन करते हैं। प्रकृति-सुन्दरी के प्रति उनका अंतुलित प्रेम तक्षा अनुपम आस्था है। प्राकृतिक वातावरण के माध्यम से कवि अज्ञेय अपने विचारों को प्रस्तुत करते हैं। जीवन-यात्रा सागर की तरह असीम तथा अनन्त है। सन्ध्या समय सूरज के न होने पर भी शून्य में और आकाश में तारा है। उसी के आश्रय से मानव सूर्योदय तक गम्य स्थान पहुँचाता है। पुन:जीवन की झलक आती है। एक स्थिति के पश्चात दूरी स्थिति धीरे-धीरे आती है अचानक। यही जीवन का चक्र या क्रम है।

सूना तारा उगा

चमक कर

साथी लगा बुलाने।

× × ×

व्यथा विदा की

जागी धीरे-धीरे।

कवि की कलम से निकली सन्ध्यादेवी का सजीव तथा कलात्मक चिन्तन देखिए।

सूरनी-सी साँझ एक

दबे पाँव मेरे कमरे में आयी थी।

मुझ को वहाँ देख

थोडा सकुचायी थी।

अज्ञेयजी के प्रकृति चित्रण में रमणीय झाँकियाँ प्राप्त होती हैं। कहीं–कहीं वे प्रकृति को देवी या शक्ति स्वरूप के रूप में देखते हैं। वसन्त के आगमन पर वे जागरित करते है – ''जागो, सरित, वसन्त आ गया! जागो!''

11. प्रतीक-योजना - बिम्बात्मकता :-

अज्ञेयजी की कविता में अनेक नवीनप्रतीक प्रयोगों का समावेश हुआ है। वे प्रतीक परम्परागत अर्थ के बदले स्वभाविकता, विविधता, मार्मिकता, मनोहरता, मनोरमता, भौतिकता, अध्यात्मिकता आदि को लेकर चलते हैं। कुछ उदाहरण देखिए –

'हाँ रात' प्रकृति और प्रणय की प्रतीक है, 'टेसू' ग्रीष्म का प्रतीक है; 'एक बूँद सहसा उछली', 'नदी के द्वीप' आदि व्यक्तिवाद के प्रतीक हैं, 'खुलगयी नाव' – प्राकृतिक वातावरण की प्रतीक हैं। 'ऊगा तारा' जिजीविशा का प्रतीक है और 'दूज का चाँद' अध्यात्मिकता का प्रतीक है।

अज्ञेयजी का बिम्बविधान अत्यन्त रमणीय है। वे अत्यन्त रोचक तथा मनोरंजन उक्तियों द्वारा अपनी कविता को सजाते हैं। एन्द्रिय बिम्ब–वस्तुपरक बिम्ब, भाव बिम्ब एवं अध्यात्मिकता बिम्ब उनकी कविता में सजीत चित्रित किये गये हैं। दृश्यबिम्ब का उदाहरण –

ऊगा तारा :-

पेडों–चट्टानों में उलझी हारी हुई लालिमा में द्योतित एक

अकेला तारा

शुक्र

हमारा।

12. उपसंहार :-

भाषा एवं शब्द-योजना, लाक्षणिकता, छन्द-विधान, अप्रस्तुत विधान आदि का निर्वाह अज्ञेय की कविता में सफलतापूर्वक हुआ है। अज्ञेय ने हिन्दी काव्य-क्षेत्र में छायावादी दूरारूढ़ कल्पना-युक्त रोमाण्टिक कविताओं तथा प्रगतिवादी राजनीतिक विचारधारा को लेकर चलनेवाली वर्ग-संघर्षमयी कविताओं के स्थान पर नूतन विचार-प्रधान कविता-धारा को जन्म दिया है। उन्होंने भारतीय साहित्य परम्परा। अलंकारों एवं प्रतीकों की प्रधानता के स्थान पर नवीन कल्पना, नवीन बिम्ब-विधान, नवीन अलंकार-विधान और नवीन प्रतीक विधान को अपनाया।

अज्ञेय कवि के रूप में जीवन के आस्वादन में विश्वास करते हैं। व्यक्तिवाद को प्रधानता देने पर भी वे अहंवादी नहीं हैं। उनकी दृष्टि में संवेदनशील व्यक्तित्व का पौधा एक पात-झरे विशाल पीपल के वृक्ष के रूप में परिणत हो सकता है। उनकी कविता में वस्तुत: मृत्यु का ही प्रत्याख्यान है।

भीतर ही भीतर झरे पत्तों के साथ गलता

और जीर्ण होता रहता हूँ

नये प्राण पाता हूँ .....

अज्ञेय की कविता की और एक विशेषता है। पार्थिव जगत की समग्रता का ग्रहण। वे राजमार्ग की जिन्दगी से, लोकजीवन से और-प्रकृति से, मानव के नये आयाम से सजीव बिम्ब ग्रहण करते हैं और उन बिम्बों के माध्यम से एक भीतरी वास्तविकता का बोध कराते हैं। ऐंठी मिट्टी का स्निग्ध धाम में धीरे-धीरे रसना, सन्नाटे में बाँक नदी की जगी चमककर झाँकती, नीलम चढ़ गई भीतर की किर, चिडिया के उड गले परपत्ती का काँपना और फिर स्थिर हो जाना आदि कविताएँ अज्ञेय के बिम्ब-विधान के सटीक उदास हैं।

अज्ञेय की कविता में नयेपन का भूत नहीं है और न मन का या मूल्य का विघटन ही। उनके भीतर का संघर्ष संघर्ष, और असंघर्ष में देखते हैं। 'मैं' और 'हम' में नहीं 'मैं' और 'हम' की एकता और अनेकता में देखते हैं। अज्ञेय की परिणति कृतित्व में निश्शेष उत्सर्ग करनेवाली विशालता-भर ही नहीं है, सत्य का प्रखर प्रकाश भी है। उन्होंने लोकगीत, संस्कृत श्लोक, जापानी कविता और न जाने कहाँ-कहाँ से लय का अन्वेषण

किया है और अपनी भाव-संतुलता के अनुरूप छन्द-योजना की हैं। वे चमत्कारवादी नहीं हैं, पर वे रचना-कौशल को गर्वपूर्वक कविकर्म मानते हैं। इसलिए उनकी रचना में से एक सजग कलाकार बराबार झाँकता रहता है।

इस प्रकार अज्ञेय ने प्रयोगवाद (नई कविता) के प्रवर्तक के रूप में हिन्दी साहित्य को सम्पन्न किया।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

अन्धायुग

- धर्मवीर भारती

8.प्र. अन्धायुग कविता में डॉ.धर्मवीर भारती की भावनाएं व्यक्त कीजिए।

(अथवा)

'अन्धायुग' कविता का सारांश लिखिए।

1. प्रस्तावना :-

सर्वजीव-कोटि में मानव का जन्म उत्तम माना जाता है। मानव जितना महान है। उतना अधम भी। मानव धन, पद, यश आदि के मोह में विविध दुराचारों में फँस रहा है। फलत: युग-युगों से अनेक युद्ध चलने आ रहे हैं। उन में महाभारत का युद्ध चलते आ रहा हैं। उन में महाभारत का युद्ध एक है। भगवान व्यासजी महाभारत के प्रधान पात्रों में एक थे। केशव और पाण्डव उन्हीं संतान थे। देखते-देखते विश्व-भर के 18 अक्षौहिणी सैनिक मारे गये। अत: व्यास जी ने अपनी संतान की कथा 'जयम्' नाम से स्वंय स्त्री।

अधर्म पर सदा धर्म की विजय होनी ही महाभारत-रचना का रहस्य है। उन्हीं पात्रों को आधार बना कर आधुनिक शैली में डॉ.धर्मवीर भारती ने 'अन्धा युग' कविता की रचना की।

2. कामना :-

विष्णु-पुराण के अनुसार भविष्य में धर्म और का ह्रास होकर धीरे-धीरे धरती का क्षय होगा। पूंजीपतियों का सत्ता होगा। नकली चेहरों का महत्त्व होगा। राज शक्तियों लोलुपहोंगी, जनता उन से पीडित होकर गहन गुफाओं में छिप-छिप कर दिन काटेंगे। भविष्य पुराण में भी यही विषय दुहराया गया है।

यहाँ कवि डॉ.धर्मवीर भारती युद्धोपरान्त का विवरण देते हैं - स्थितियाँ, मनोवृत्तियाँ, आत्माएं सब विकृत हो जाती हैं और मर्यादा की डोरी टूट जाती है। लोग अन्धे, पथभ्रष्ट, आत्महार और विगलित हो अन्धे गुफाओं में जीवन बिताते रहते हैं। भविष्य का रक्षक अनासवत्त योगी तथा जगद् गुरु कृष्ण पुन: अवतरित हों और ज्ञान-ज्योति जगा कर इस कलिकाल (पाप का समय) के अन्धकार में प्रकाश-पुज व्याप्त करें- यह कवि की कामना है।

3. गीति-नाट्य :-

अन्धा युग कविता गीति-नाट्य में चलती है। मंच का नामकरण 'कौरव नगरी' रखा गया है। पर्दे के पीछे से महाभारत के मारण-काण्डं की व्याख्या होती है - कौरवों और पाण्डवों दोनों ने मर्यादा का अतिक्र मण किय है। अधिकार के अंधैपन के कारण विवेक हार गया। ममता और कोमलता के स्थान पर अन्धकार व्याप्त हुआ। द्वापर का युग बीत कर अन्तिम दिन की सन्ध्या हुई।

4. कौरव नगरी- क्रमशान भूमि :-

पदी उठने पर दो प्रहरियों के बीच वार्तालाप चलता है। युद्ध के सत्रह दिन बीत कर अठारहवें दिन की सन्ध्य समय में सारी कौरव नगरी में रत्न जटित फर्शों पर कौशव-वधुएँ मंथर-मंथर गवि सो सुरभित पवन-तरंगों की तरह चलती थी। उनका सुहाग मिट गया है और वे विधवा बन गयी। उनका जीवन मरुभूमि बन गया है। महायुद्ध में मर्यादा का अतिक्रमण हुआ प्रहरी भाले और दाले रख कर किसी की रक्षा कर न पाये। उनकी वीरता का कोई प्रभाव न रहा और उनका साहस प्रकट न हो सका, क्यों कि वे प्रहरी मात्र से और युद्ध में जा न पाये। इतने में आँधी-तूफान की भयंकर ध्वनि और अन्धेरे के साथ गिद्धों का झुण्ड आसमान में चिरने लगता है। नरभक्षी गिद्ध गौरव नगरी में प्रवेश करते हैं। शवों की ढ़ेरों के कारण वे गिद्ध घिरते रहते हैं। कौशव नगरी आज श्मशान भूमि बन गयी है।

5. धृतराष्ट्र-मर्यादा का अतिक्रमण :-

धृतराष्ट्र से विदुर मिलता है। धृतराष्ट्र और गान्धारी चिन्तागुस्त बैठे रहते हैं। विदुर उनके मौन-धारण का कारण पूछता है। धृतराष्ट्र आन्दोलन के कारण अपनी सिस्हायता प्रकट करता है। विदुर धृतरार्ष्ट की बहाने बाजी का खण्डन करता है। पितामह भीष्म, गरुद्रोण और भगवान कृष्ण के हित-वचनों की याद दिला कर विदुर धृवराष्ट्र को सारे युद्ध की कुंजी बताता है। विदुर धृतराष्ट्र को सारे युद्ध की कुंजी बताता है। विदुर धृतरार्ष्ट को मर्यादा अतिक्रामक बताता है। धृतरार्ष्ट अपने अन्धेपन की आउ लेकर बचना चाहता है। किन्तु विदुर धृतराष्ट्र के समर्थन का खण्डन करता है। व्यक्ति दोष के कारण मारण-काण्ड रचा गया है।

धृतरार्ष्ट अपने वैयक्तिक दर्शन का सम्बन्ध विश्वदर्शन से करता है। विदुर को वह बताता है - ''यह सारा संसार अन्धेपन से ही उपजा है और मैं उसका एक अंश सूत्र हूँ। इन्द्रजाल की मांयसृष्टि के समान घने अन्धकार से काले बिन्दु मात्र थे मेरे मन में प्रविष्ट हुआ। मेरी सारी वृत्तियां उसी से परिचालित हो गयी। मेरा स्नेह, मेरी घृणा, मेरी नीति और मेरा धर्म पूर्णतया वैयक्तिक थे। कौशव मेरी मांसलता से उत्पन्न हुए थे। उनके प्रति मेरी मनता थी। पिता के पुत्रों पर प्रेम होना नीति है।''

6. विराट विश्व-दर्शन :-

विदुर धृतरार्ष्ट के वचनों से सहमत नहीं होता है। वह सारे किनारा कारण धृतराष्ट्र को बताता है। गत सत्रह दिनों से युद्ध की विशेषतों वह जानता ही तो था। फिर धृतराष्ट्र विदुर को अपनी असक्तवा बताता है। युद्ध की बातें तो वह संजय से रोजाना बताना है। युद्ध की बातें तो रह, संजय से रोजना सुनता था और सारा समाचार उसे प्राप्त होता था। उसकी आँखे नहीं होती हैं। वह केवल कानों पर ही आधारित था। कल्पना मात्र उसकी सहायिका थी। दुश्शासन की छाती चीर कर भीम का अंजली में रक्तपान करना धृतराष्ट्र के लिए कल्पना मात्र थी।

गाँधारी आगे ये वचन सुन न पोती, अत: पति धृतराष्ट्राओं से वह विषय बन्द करने के कहती है। तब धृतराष्ट्र अपनी निजी भावना व्यक्त करता है। वैयक्तिक सीमा सीमित है, जहाँ विश्व की सीमा असीम है। विश्वसमाज रूपी समुद्र की लहरों के सामने मेरा वैयक्तिक जीवन सीमित और कुण्ठित हो जाता है। विश्व-समाज रूपी समुद्र की लहरें (चेतना) कोटि-कोटि योजन तक चालित होती है। मेरे अन्तर्मन में अब यथार्थ का बोध हुआ हैं।

किन्तु, लाभ क्या है ? सब कुछ उजाडे जाने के पश्चात, पछतावे से कुछ नहीं बनता! विराट विश्व दर्शन के सामने संकुचित वैयक्तिक दर्सन हार जाता है।

7. उपसंहार :-

मानव ज्ञानबद्ध जीव है। वह विश्व दर्शन करता है। वह ममता, दया, करुणा, नीति, धर्म, न्याय अआदि अनेक विषय जानता है और परस्पर चर्चा करता है। किन्तु ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध वासना आदि के कारण वह युद्धोन्मादी होता है। फलत: प्रजा, धन, गौरव आदि का नष्ट होता है। ससुंपन्न वैभव की नगरी श्मशान वाटिका बन जाती है। रूप लावण्य भी नव वधुएँ विधवाएं बन कर उनका जीवन मरुभूमि बन जाता है।

इस सब का कारण मानव आन्तरिक रूप से अन्धा बनता जा रहा है। हर दिन, हर-क्षण विश्व में आज भी विविध प्रदेशों में युद्ध-युद्ध दीपक बुझ कर अन्धकार छा गया है। इस लिए कवि डॉ.धर्मवीर भारती इसे अन्धा युग कहते हैं, जो सत्य भी है।

धर्मवीर भारती विश्व का आविर्भाव अन्धकार से मानते हैं जो वैज्ञानिक सत्य है (The Universe is emerged from darkness) यह विषय वेदों में भी प्रामाणित किया गया है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् आदित्य वर्णं तमसस्तुपारे।

सर्वाणि रूपाणि विचित्यधीर:, नामानिकृत्वा अभिवदन् थदास्ते।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

Laser Type setted :
Bapuji Hindi Vidyalayam & Tankan Vidyalayam
Bapuji Graphics, Sharoff Bazar, TENALI.
Mobile : 98480 80491